स्वर्ण जयन्ती प्रकाशन 2013

BIHAR YOGA

सूर्य नमस्कार

सूर्य से शक्ति प्राप्त करने की विधि

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

सूर्य नमस्कार



WORLD YOGA CONVENTION 2013
GANGA DARSHAN, MUNGER, BIHAR, INDIA
23rd–27th October 2013

सूर्य नमस्कार

सूर्य से शक्ति प्राप्त करने की विधि

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



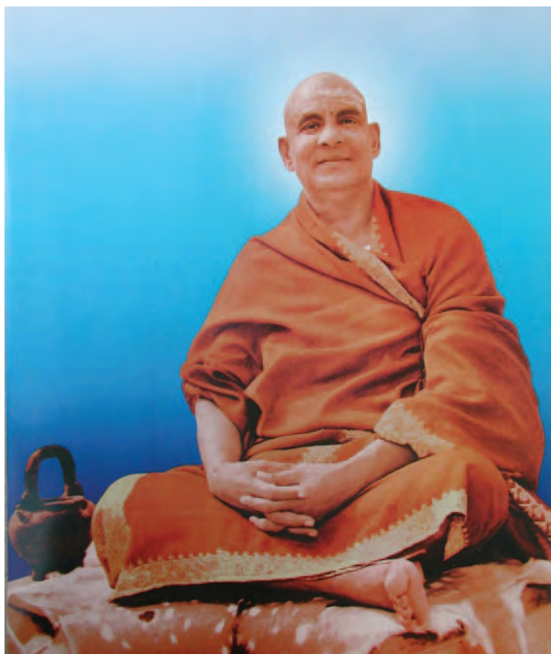
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

बिहार योग विद्यालय द्वारा — *प्रथम प्रकाशन 1976*
द्वितीय संशोधित संस्करण 1987
पुनर्मुद्रण 1992
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा — *पुनर्मुद्रण 2003, 2007, 2008, 2013*

ISBN: 978-81-85787-47-3

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,
मुंगेर, बिहार, भारत
मुद्रक—थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड,
नई दिल्ली

वेबसाइट : www.biharyoga.net
www.rikhiapeeth.net



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय-सूची

प्रस्तावना

योग के क्षेत्र में सूर्य नमस्कार एक जीवनशक्ति प्रदायक अभ्यास के रूप में विख्यात है। इसके अभ्यास के परिणामस्वरूप स्वास्थ्य, शक्ति तथा क्रियाशीलता में वृद्धि होती है। साथ-ही-साथ आध्यात्मिक प्रगति भी होती है। इसका मिला-जुला परिणाम चेतना के विकास के रूप में परिलक्षित होता है।

अब लोग मात्र कर्मकाण्डों तक ही सीमित नहीं हैं। वे अपने आंतरिक व्यक्तित्व की गहराइयों में झाँकने के लिए भी योग को अपना रहे हैं। यद्यपि शारीरिक, मानसिक तथा भावनात्मक विकास के महत्त्व को समझा जाने लगा है, परन्तु अत्यधिक व्यस्तता के कारण लोगों के लिए नियमित रूप से योगाभ्यास कर पाना सम्भव नहीं हो पाता, लेकिन बिना अभ्यास के तो लाभ संभव नहीं है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तक की रचना की गई है, जो व्यस्त लोगों के लिए एक संक्षिप्त, परन्तु पूर्ण अभ्यास – सूर्य नमस्कार के विषय में पूर्ण जानकारी देती है। सूर्य नमस्कार अपने आप में एक पूर्ण साधना है जिसमें आसन, प्राणायाम तथा ध्यान की क्रियाएँ सम्मिलित हैं।

आधुनिक उलझनपूर्ण जीवन-पद्धति में मानसिक तनाव, चिन्तायें तथा अनेक समस्यायें व्यक्तिगत संबंध, आर्थिक विषमता तथा युद्ध और विनाश के भय के कारण नित्य उत्पन्न होती रहती हैं। साथ-ही-साथ स्वचालित यंत्रों के उपयोग तथा औद्योगिक विकास के कारण मानव शारीरिक श्रम से भी क्रमशः दूर हो गया है। शारीरिक तथा मानसिक रूप से अस्वस्थ रहने वालों की संख्या बढ़ रही है। बिना किसी प्रभावी कदम के इस पर नियंत्रण पाना सम्भव नहीं है।

योगाभ्यास तनावों को दूर करने तथा शारीरिक व मानसिक रोगों के उपचार के लिए एक प्रभावी पद्धति है। योगमय जीवन प्रारम्भ करने के उद्देश्य से सूर्य नमस्कार एक सम्पूर्ण अभ्यास है और इसके लिये मात्र 5 से 15 मिनट तक का नियमित समय देकर इससे प्राप्त होने वाले आश्चर्यजनक लाभों का अनुभव किया जा सकता है। इसलिये अत्यंत व्यस्त व्यक्तियों, यथा–व्यवसायियों, गृहणियों, परीक्षा में व्यस्त विद्यार्थियों अथवा प्रयोगशाला में व्यस्त रहने वाले वैज्ञानिकों के लिए भी यह एक आदर्श एवं उपयुक्त अभ्यास है।

यह पुस्तक उन सभी जिज्ञासुओं के लिए है, जिनकी रुचि आत्म-विकास में है। यह स्मरण रखें कि पुस्तक मात्र निर्देशन कर सकती है। हमारा मुख्य उद्देश्य यह है कि पाठक सूर्य नमस्कार को अपनी दिनचर्या में सम्मिलित कर इससे होने वाले लाभों को अनुभव कर सकें। सम्भवतया आप पहले से ही जानते हैं कि सूर्य नमस्कार से शरीर तथा मन सशक्त होता है तथा रोगों से मुक्ति मिलती है। परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है। इस सत्यता को परखने के लिए आप स्वयं इसका अभ्यास कीजिये।

अनेक आसनों, प्राणायामों, चक्र जागरण तथा मंत्रोच्चारण से युक्त इस अभ्यास में इतनी पूर्णता है कि शायद ही अन्य कोई अभ्यास इसके समकक्ष रखा जा सके। सूर्य नमस्कार मात्र शारीरिक व्यायाम नहीं है। नि:संदेह इसमें शरीर के बारी-बारी से आगे तथा पीछे की ओर मुड़ने के कारण समस्त अंगों तथा मांसपेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता है, उनकी मालिश होती है तथा उनमें सामंजस्य आता है। आध्यात्मिक साधना के रूप में यह एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास है।

सूर्य नमस्कार वैदिक काल से मनीषियों की देन है। सूर्य नमस्कार का शाब्दिक अर्थ है–सूर्य को नमस्कार। प्राचीन काल में दैनिक कर्मकाण्ड के रूप में सूर्य की नित्य आराधना की जाती थी, क्योंकि यह आध्यात्मिक चेतना का एक शक्तिशाली प्रतीक है। बाह्य तथा आंतरिक सूर्य उपासना सामाजिक, धार्मिक कर्मकाण्ड के रूप में की जाती थी। ताकि प्रकृति की उन शक्तियों को अनुकूल बनाया जा सके जो मनुष्य के नियंत्रण की सीमा से बाहर हैं। यह पद्धति उन आत्मज्ञानियों द्वारा विकसित की गयी है, जिन्हें यह पता था कि इसके अभ्यास से स्वास्थ्य की रक्षा होती है तथा सामाजिक रचनात्मकता और उत्पादन के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनती हैं।

सूर्य नमस्कार तीन तत्त्वों से संयुक्त है–रूप, ऊर्जा तथा लयबद्धता। बारह शारीरिक स्थितियों के भौतिक साँचे में ढली हुई पद्धति से प्राणों (सूक्ष्म ऊर्जा जो सूक्ष्म शरीर को क्रियाशील बनाती है) की उत्पत्ति होती है। इन स्थितियों का अभ्यास लयबद्ध ढंग से करने पर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के आवर्तन प्रभावित होते हैं, यथा–दिवस के चौबीस घण्टे, वर्ष के बारह राशि चक्र तथा मानव शरीर के जैव लय। हमारे शरीर तथा मन पर पड़ने वाले इन स्थितियों और सूक्ष्म ऊर्जा के प्रभाव के फलस्वरूप जीवन की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है तथा चारों ओर की दुनिया के प्रति हमारी प्रतिक्रिया सकारात्मक बनती है। इसे स्वयं अनुभव करके देखिये।

सौर परम्परा

सूर्य नमस्कार एक ऐसा अभ्यास है, जिसका प्रारम्भ अति प्राचीन काल से उस समय हुआ जब मनुष्य सबसे पहले अपने अंदर स्थित आध्यात्मिक शक्ति के प्रति सजग हुआ था। यह सजगता ही योग की आधारशिला है। सूर्य नमस्कार का शाब्दिक अर्थ है–सूर्य को नमस्कार। इसे सूर्य की उपासना के रूप में देखा जा सकता है। योग की दृष्टि से सूर्य नमस्कार के अभ्यास से मानव प्रकृति का सौर पक्ष जाग्रत होता है तथा सर्वोच्च चेतना का विकास करने हेतु जीवनदायिनी ऊर्जा प्राप्त होती है।

वैदिक काल में सूर्य-उपासना

सूर्य-उपासना मानव की आंतरिक अभिव्यक्तियों का एक अत्यन्त सहज रूप रही है। प्राचीन परम्पराओं में सूर्य-उपासना को किसी-न-किसी रूप में स्वीकार किया गया है। इसमें विभिन्न प्रकार के सौर प्रतीकों तथा देवी-देवताओं को भी सम्मिलित किया गया है। इस प्राचीन परम्परा को वैदिक सभ्यता में सर्वाधिक सुरक्षित रखा गया है। आज भी भारत के अनेक भागों में सूर्य-उपासना दैनिक कर्मकाण्ड के रूप में की जाती है।

राम सूर्यवंश के ही राजा थे। वेदों में सूर्य के विषय में विभिन्न प्रकार के वर्णन पढ़ने को मिलते हैं ऋग्वेद के कुछ सूर्य विषयक विवरणों का सारांश इस प्रकार है–

"इस देदीप्यमान देव की किरणें फैल रही हैं। प्रत्येक प्राणी इसके दर्शन कर सकता है।"

"सूर्य! तू अनन्त आकाश की अपनी यात्रा में अनेक पीढ़ियों को जन्म लेते और नष्ट होते हुए देखता है।"

"तेरे रथ में सात घोड़े हैं। तेरे केश आग की लपटें हैं।"

"तू दुर्बलताओं को नष्ट करता है, रोगों को दूर करता है, दुष्टों का नाश करता है और उपासकों की रक्षा करता है।"

"ओ कान्तिमय सूर्य! हम ऋषि-मुनि तेरे पूजनीय गौरव की छत्रछाया में उपासना-मनन करते हैं। तू हमारी प्रज्ञा को प्रेरित कर।"

सूर्योपनिषद् में कहा गया है कि जो व्यक्ति सूर्य को ब्रह्म मानकर उसकी उपासना करता है, वह शक्तिशाली, क्रियाशील, बुद्धिमान तथा दीर्घजीवी होता है। इस ग्रंथ में सूर्य का चित्रण इस प्रकार किया गया है– वह स्वर्ण के समान दीप्त, चार भुजाओं वाला, लाल कमल पर विराजमान तथा चार अश्वों द्वारा संचालित रथ पर आरूढ़ है। वह समय चक्र को गति प्रदान करता है। पंच तत्त्व तथा पंच कर्मेन्द्रियां उसी से निःसृत हैं। अक्षयोपनिषद् में सूर्य को ईश्वर के उस रूप में चित्रित किया गया है जो अनगिनत किरणों वाले सूर्य का रूप धारण करता है तथा सम्पूर्ण मानवता के हित में चमकता रहता है। बृहदारण्यक उपनिषद् में भी सूर्य का एक वर्णन इस प्रकार है–

प्रकाश के सारतत्त्व, ओ देव !
तू मुझे असत् से सत् की ओर,
अंधकार से प्रकाश की ओर,
मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चल ।

प्राचीन वास्तुकला में सूर्य का सन्दर्भ

अनेक सम्प्रदायों में सूर्योपासना आज भी किसी-न-किसी रूप में अवश्य विद्यमान है। कहीं उगते हुए सूर्य की, कहीं डूबते हुए सूर्य की तथा कहीं मध्य दिवसीय सूर्य की उपासना का विधान है। यद्यपि लोग सूर्य की उपासना बाह्य रूप से ही करते हैं, परन्तु वास्तव में यह प्रतीक मात्र है। मुख्य उद्देश्य है– इसके माध्यम से उस परब्रह्म की उपासना करना जो सृष्टि का रचयिता, पालनकर्ता तथा संहारकर्ता भी है और सूर्य जिसका प्रतीक मात्र है।

भारत में आज भी सूर्य के अनेक मंदिर मिलते हैं, जिनमें से कुछ तो 8वीं शताब्दी के हैं और जिनकी वास्तुकला अद्भुत है। इनमें सबसे विख्यात कोणार्क (उड़ीसा) का मंदिर है, जो 13 वीं शताब्दी में निर्मित हुआ था। अन्य मुख्य सूर्य मंदिर काश्मीर, गुजरात तथा आन्ध्र प्रदेश में हैं।

प्राचीन काल में सूर्य के उपासकों द्वारा सौर-प्रणाली की वैज्ञानिक व्याख्या भी विकसित की गई थी। ज्योतिष में सूर्य सिद्धान्त एक प्राचीन विधि है जो समय की गणना, ग्रहों की गति, ग्रहण सायन आदि से संबंधित है।

अन्य परम्पराओं में भी सूर्योपासना के अनेक वर्णन मिलते हैं। पिरामिड, प्राचीन मूर्तियाँ तथा शिलालेख इस तथ्य को उजागर करते हैं कि तत्कालीन समाज को सूर्य, चन्द्रमा तथा ग्रहों की गति के बारे में अत्यंत गहन ज्ञान था। प्राचीन संरचनाओं में अनेक या तो मंदिर थे अथवा वेधशालायें थीं या दोनों ही, क्योंकि उस समय धर्म तथा विज्ञान के बीच इस प्रकार का अन्तर नहीं था जैसा कि वर्तमान में है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि तत्कालीन समाज में किस प्रकार सूर्य संबंधी वैज्ञानिक अध्ययन को कर्मकाण्ड का एक अंग बना दिया गया था।

मिस्रवासियों ने सूर्योपासना की एक अलग जटिल पद्धति अपनायी। उन्होंने अपने सूर्य संबंधी ज्ञान के द्वारा पिरामिडों का निर्माण किया और उनमें मृत राजाओं के शरीरों को एक विशेष विधि से सुरक्षित करके रख दिया, ताकि वे सूर्य के समान अनंतकाल तक रह सकें। पिरामिड स्वयं सूर्य के प्रतीक हैं तथा उनके निर्माण में इस तथ्य को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया कि उन्हें अधिक-से-अधिक सूर्य रश्मियाँ मिला करें।

ऐज़टेक इन्का तथा मायन सभ्यताओं में अनेक ऐसे मंदिर थे, जिनमें सौर देवों की उपासना की जाती थी। कहा जाता है कि हजारों वर्ष पूर्व के मायन कैलेण्डर में सूर्य के बारे में अत्यंत विस्तारपूर्वक विश्वसनीय जानकारी दी गई है।

अटलाण्टिस की किवदंतियों के अनुसार इस काल में भी सूर्योपासना की जाती थी तथा सौर ऊर्जा को विशाल स्फटिकों के माध्यम से घनीभूत करके उससे शहरों को तथा परिवहन व्यवस्था को बिजली दी जाती थी।

ब्रिटेन के स्टोनहेंज के बारे में ऐसा विश्वास किया जाता है कि भावी मौसम, अयनांतों संक्रान्ति तथा सायनों के विषय में भविष्यवाणी करने हेतु इसका उपयोग एक सौर वेधशाला के रूप में किया जाता था। सम्भवतया यह एक प्रकार का उपासना स्थल भी रहा होगा। इतने जटिल विज्ञान को तत्कालीन आदि मानव किस प्रकार समझ सका? यह आश्चर्य की बात है।

अमेरिका के मूल निवासी (रेड इंडियन्स) की जीवन-पद्धति ऋतुओं तथा सूर्य के लयबद्ध चक्रों पर आधारित थी। वे सूर्य के उपासक थे तथा उनकी

अनेक आस्थाओं, कर्मकाण्डों तथा भवन-निर्माण विधियों के आधार मण्डल हुआ करते थे, जो सूर्य के आकाश मार्ग के प्रतीक थे।

चीनी पुरातन दर्शन के यांग तथा यिन प्रकृति के विद्यमान द्विविध संबंधों (जिनके प्रतीक सूर्य-चन्द्रमा अथवा इड़ा-पिंगला हैं) का प्रतिनिधित्व करते हैं।

आधुनिक अवलोकन

पुरातन सभ्यताओं तथा धर्मों की समाप्ति के साथ-साथ सूर्योपासना का महत्त्व भी लगभग समाप्त होता गया। हमारी आधुनिक काल में धार्मिक मान्यताओं की नींव पर ही सूर्य से संबंधित जानकारी को वैज्ञानिक रूप दिया गया है। इस प्रकार सूर्य के गर्भ में छिपे रहस्यों का उद्घाटन हुआ है। इससे ग्रहीय व्यवस्था के केन्द्र-बिन्दु सूर्य के साथ मानव के संबंधों के बारे में एक नई समझ पैदा हुई है।

कभी-कभी सूर्य के तल पर विशाल धधकती अग्नि का विस्फोट होता है। पृथ्वी से विस्फोट सूर्य पर धब्बों की तरह दिखाई देते हैं। ये धब्बे सर्वदा एक ही जैसे नहीं होते, उनमें कभी तीव्रता तो कभी घटने का चक्र चलता रहता है। अनुमानत: इनका एक चक्र वर्षों में पूर्ण होता है। शोधों के आधार पर यह पाया गया है कि जब भी धब्बों की तीव्रता का चक्र प्रारम्भ होता है तो इससे पृथ्वीवासी भी प्रभावित होते हैं तथा उस बीच युद्ध, क्रांतियाँ तथा अनेक उथल-पुथल होती हैं।

'अमेरिका फाउण्डेशन फॉर दि स्टडी ऑफ साइकिल्स', ने शोधों में यह पाया है कि इन धब्बों में 1300 प्रकार की बातों पर प्रभाव पड़ते हैं। उदाहरणार्थ उत्तर ध्रुवीय ज्योतियाँ, पुच्छल तारों, भूकम्पों, ज्वालामुखीय उद्भेद, उल्कापात, कीटाणु कोश परिपक्वन, वृक्षों की विद्युतीय क्षमतायें, फैशन, मतदान प्रवृतियाँ, स्टाक मार्केट के मूल्यों में उतार-चढ़ाव, रक्तचाप तथा मधुमेह में वृद्धि अन्य अनेकानेक असम्बद्ध लगने वाली घटनायें। यद्यपि इन तथ्यों पर सहसा विश्वास नहीं होता, परन्तु सूर्य तथा इसके विकिरणों के व्यापक शक्तिशाली प्रभावी और पृथ्वी पर सूर्य के लगातार पड़ने वाले ऊष्मा-युक्त प्रभाव समझने के पश्चात् ये चौकाने वाले नहीं लगते। वस्तुत: सूर्य पृथ्वी पर पाये जाने वाले जीवन का एक आवश्यक अंग है।

हमारे जीवन पर पड़ने वाले सूर्य के इन प्रभावों को ठीक से समझ लेने के पश्चात् सूर्य नमस्कार से होने वाले लाभों के अनदिखे, अनजाने आयाम

हमारे सामने प्रकट होने लगते हैं। साथ-ही-साथ यह भी समझने में सहायता मिलती है कि हमारे पूर्वजों ने इस अभ्यास को इतना अधिक महत्त्व क्यों दिया। अपने आप में सम्पूर्ण अभ्यास के माध्यम से हम अपनी अन्तर्निहित शक्तियों को जाग्रत करके शक्ति व स्फूर्ति से परिपूर्ण नवजीवन प्राप्त कर सकते हैं तथा उच्च चेतना के साथ अपनी चेतना का संबंध जोड़ सकते हैं।

सूर्य नमस्कार

सूर्य नमस्कार 12 शारीरिक स्थितियों से मिलकर बना है। बारी-बारी से आगे तथा पीछे मुड़ने वाले इन आसनों के माध्यम से शारीरिक अंगों तथा मेरुदण्ड में काफी खिंचाव उत्पन्न होता है तथा वे लचीले बनते हैं। अत: अन्य अभ्यासों की अपेक्षा सूर्य नमस्कार कहीं अधिक प्रभावशाली है।

कई प्रारम्भिक अभ्यासियों के शरीर नसों के कड़ेपन, मांसपेशियों में तनाव तथा जोड़ों में विषाक्त पदार्थों के जमा होने के कारण कड़े रहते हैं। इनसे मुक्ति पाने के लिये सूर्य नमस्कार का अभ्यास (प्रत्येक शारीरिक स्थिति में) सजगता के साथ, तनावरहित रहते हुए धीरे-धीरे करना चाहिये। यद्यपि प्रारम्भ में शरीर कड़ा होने के कारण थोड़ा तनाव पड़ सकता है, परन्तु बाद में इस अभ्यास में सहजता आती जायेगी। शरीर को लचीला एवं स्वस्थ बनाये रखने के लिए सूर्य नमस्कार का नियमित अभ्यास एक शक्तिशाली तथा प्रभावशाली उपाय है।

सूर्य नमस्कार के अभ्यास के पूर्व यह उचित है कि एक-एक करके इसके प्रत्येक आसन में अलग-अलग दक्षता प्राप्त की जाये। इसके बाद आसनों के साथ श्वास प्रक्रिया को भी जोड़ना चाहिये। आसनों के समय श्वास लेने के जिस सिद्धांत को अपनाया जाता है, वह यह है कि पीछे मुड़ते समय श्वास अन्दर ली जाती है, क्योंकि सीना फैलता है। सीना फैलने के कारण फेफड़े भी फैलते हैं। अत: आगे झुकते समय श्वास बाहर निकाली जाती है, क्योंकि छाती तथा उदर में संकुचन होता है।

अभ्यास के पूर्व

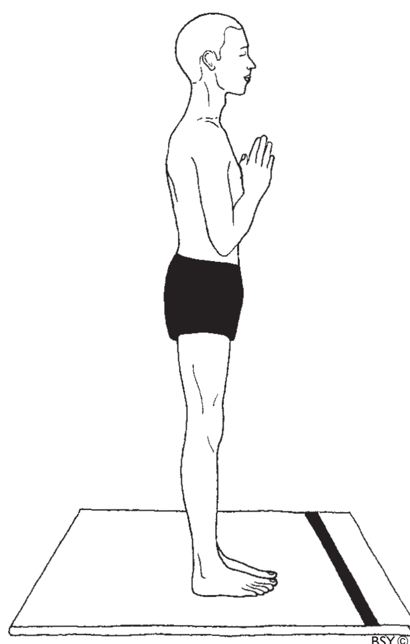
अभ्यास प्रारम्भ करने के पूर्व अपने पैरों को सटाकर या थोड़ा दूर रख कर तथा हाथों को बगल में शिथिल अवस्था में रखते हुए खड़े हो जायें।

आँखें बन्द करके पूरे शरीर को अधिक-से-अधिक तनावरहित करने का प्रयास करें।

योग निद्रा के अभ्यास की भाँति इस अभ्यास में भी शारीरिक सजगता का विकास करें। अपनी चेतना को सिर से प्रारम्भ करते हुए पैर तक घुमायें। यदि शरीर के किसी भाग में किसी प्रकार का तनाव अनुभव हो तो उसे शिथिल करने का प्रयास करें। पुन: सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजगता का विकास करें। यह सजगता एक टॉर्च की तरह है, जिसका प्रकाश शरीर के अंधकार को चीरता हुआ पड़ता है। अब अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें। अपने से प्रश्न करें – "मैं अपने शरीर में कैसा अनुभव कर रहा हूँ? क्या मैं शिथिल हूँ? क्या मैं सुविधाजनक स्थिति में हूँ?" आवश्यक होने पर अपनी शारीरिक स्थिति में थोड़ा परिवर्तन करके शरीर को अधिक आरामदायक स्थिति में ले जायें। इस समय ऐसा अनुभव करें, मानो सिर के ऊपरी भाग में रस्सी बाँधकर आपके पूरे शरीर को कोई ऊपर की ओर खींच रहा है।

अब अपनी चेतना को अपने पैर के तलवों पर ले जायें तथा भूमि और तलवों के सम्पर्क बिन्दुओं का अनुभव करें। सोचें कि गुरुत्वाकर्षण शक्ति द्वारा पूरा शरीर नीचे की ओर खिंचा जा रहा है तथा सभी शारीरिक तनाव पैरों के माध्यम से भूमिगत होते जा रहे हैं। साथ-ही-साथ बढ़ती हुई जीवन शक्ति तथा आरामदायक एवं शिथिल शारीरिक स्थिति पर भी सजगता बनाए रखें। इस स्थिति में कुछ समय तक रहने के पश्चात् सूर्य नमस्कार का प्रारम्भ करें तथा लम्बी गहरी श्वास अंदर लें।

सूर्य नमस्कार की 12 स्थितियाँ



स्थिति 1: प्रणामासन

दोनों पैरों को एक साथ रखते हुए या थोड़ा अलग रखते हुए, सीधे खड़े हो जाइए और आँखों को बन्द कर लीजिए।

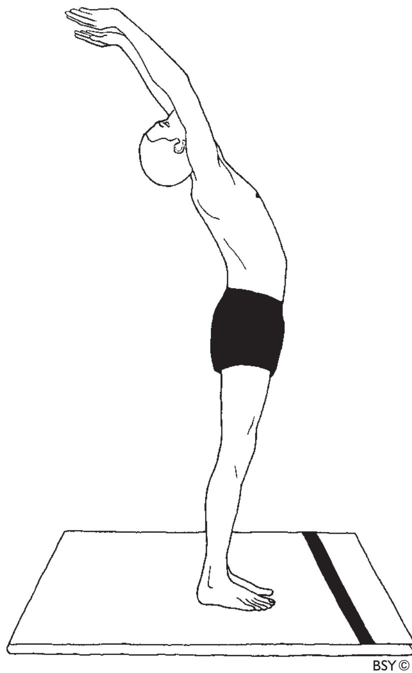
दोनों हथेलियों को छाती के सामने नमस्कार की मुद्रा में जोड़िए।

हथेलियों की इस मुद्रा तथा उससे छाती पर पड़ने वाले दबाव एवं प्रभाव के प्रति अपनी सजगता को बनाए रखिए।

मानसिक रूप से सूर्य के प्रति सम्मान प्रकट कीजिए, जो सम्पूर्ण जीवन का स्रोत है।

पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिए।

श्वास – सामान्य श्वसन कीजिए।



स्थिति 2: हस्त उत्तानासन

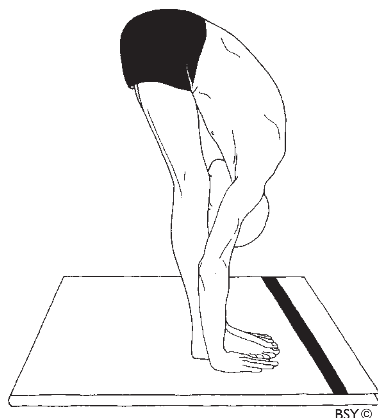
दोनों भुजाओं को सिर के ऊपर उठाते हुए तानिए। हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली हुई हों।

दोनों भुजाओं को कंधों की सीध में अलग-अलग रखिए।

पीठ को धनुषाकार बनाते हुए पूरे शरीर को तानिए।

आराम से जितना सम्भव हो, सिर को पीछे की ओर झुकाइये और पीछे पीठ के ऊपरी भाग के झुकाव के प्रति सजग बन जाइए।

श्वास – भुजाओं को ऊपर उठाते समय श्वास अन्दर लीजिए।



स्थिति 3: पादहस्तासन

गतिशीलता बनाये रखते हुए नितम्बों से आगे की ओर झुकिये।

अपने हाथों को जमीन पर दोनों पैरों की बगल में रखिये और लालाट को घुटने से स्पर्श कराने का प्रयास कीजिए।

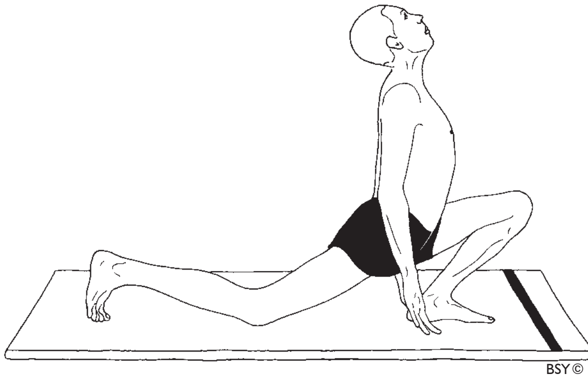
अधिक जोर मत लगाइए। पैर सीधे रहने चाहिए।

पीठ को सीधा रखने का प्रयास कीजिए। अपनी सजगता को श्रोणि प्रदेश पर एकाग्र कीजिए, जो कि पीठ एवं पैरों की मांसपेशियों के खिंचाव का केन्द्रबिन्दु है।

श्वास – सामने की ओर झुकते हुए श्वास बाहर छोड़िये।

उदर को संकुचित करते हुए प्रयास कीजिए कि अन्तिम स्थिति में फेफड़े से अधिक-से-अधिक वायु बाहर निकले।

सावधानियाँ – जिन व्यक्तियों की पीठ से सम्बन्धित समस्याएँ हों वे आगे की ओर पूरा न झुकें, रीढ़ की हड्डी को सीधा रखते हुए केवल नितम्बों से 90^0 तक झुकें या बिना किसी तनाव के आराम से जितना झुक सकते हैं, उतना झुकें।



स्थिति 4: अश्वसंचालन

दोनों हाथों को जमीन पर पैरों की बगल में रखिये, अब बाएँ घुटने को मोड़िये और दाएँ पैर को जितना सम्भव हो पीछे ले जाइए।

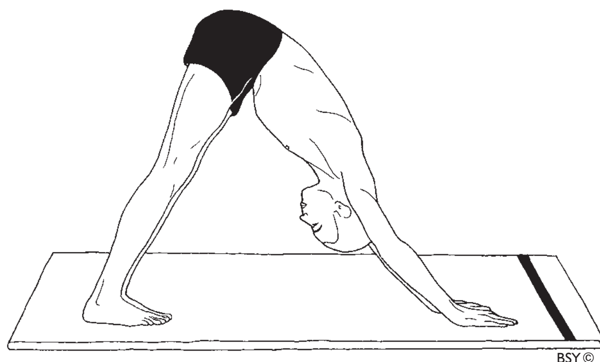
दाएँ पैर का पंजा व घुटना जमीन को स्पर्श करे।

श्रोणि प्रदेश को आगे लाइये, कमर से रीढ़ को धनुषाकार बनाते हुए ऊपर देखिये। हाथ की ऊँगलियों के अग्र भाग जमीन पर टिके रहें। शरीर को इस स्थिति में संतुलित कीजिए।

अपनी सजगता को भ्रूमध्य पर केन्द्रित कीजिए।

खिंचाव को अपनी जाँघों से सामने पूरे शरीर से होते हुए ऊपर भ्रूमध्य तक अनुभव कीजिए।

श्वास – सीने को सामने उठाते और पैर को पीछे ले जाते हुए श्वास अन्दर लीजिए।



स्थिति 5: पर्वतासन

हथेलियों को जमीन से सटा लीजिए।

बाएँ पैर को पीछे दाएँ पैर के पास ले जाइए। धीरे-धीरे नितम्बों को ऊपर उठाइए और साथ-साथ सिर को दोनों भुजाओं के बीच में ले आइए। इससे शरीर जमीन के साथ त्रिभुजाकार स्थिति में आ जायेगा।

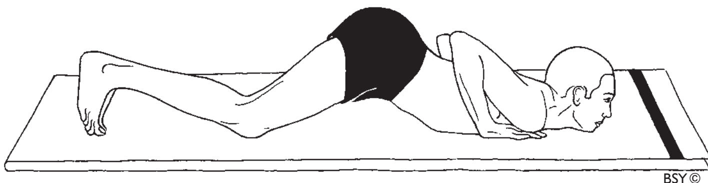
अन्तिम स्थिति में पैर तथा भुजाएँ सीधी रहनी चाहिए।

एड़ियों को जमीन से टिकाने का प्रयास कीजिए, किन्तु अधिक जोर मत लगाइए।

सिर को जितना हो सके आगे की ओर झुकाइए, जिससे घुटनों को देखा जा सके।

अपनी सजगता को गर्दन पर बनाए रखिए।

श्वास – बाएँ पैर को पीछे ले जाते समय श्वास छोड़िये।



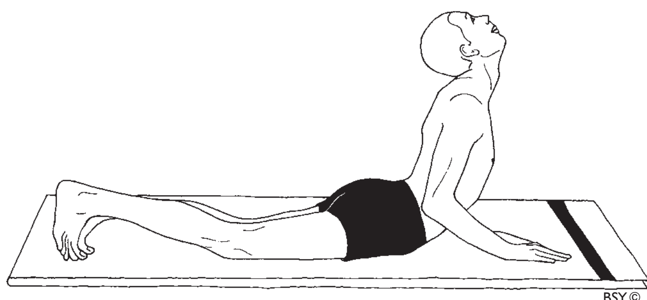
स्थिति 6: अष्टांग नमस्कार

घुटनों को नीचे लाते हुए जमीन से सटाइए, फिर नितम्बों को ऊपर रखते हुए सीने एवं ठुड्ढी को जमीन से सटाइए।

हाथ, ठुड्ढी, सीना, घुटने और पंजे जमीन का स्पर्श करते हुए रहें, मेरुदण्ड को धनुषाकार स्थिति में लाइए।

अपनी सजगता को शरीर के मध्य भाग में केन्द्रित कीजिए या पीठ की मांसपेशियों पर।

श्वास – इस स्थिति में श्वास को बाहर रोक कर रखिए। श्वास-प्रश्वास की क्रिया नहीं होगी।



स्थिति 7: भुजंगासन

जाँघों को भूमि पर टिकाते हुए भुजाओं के सहारे सीने को आगे ऊपर की ओर उठाएँ।

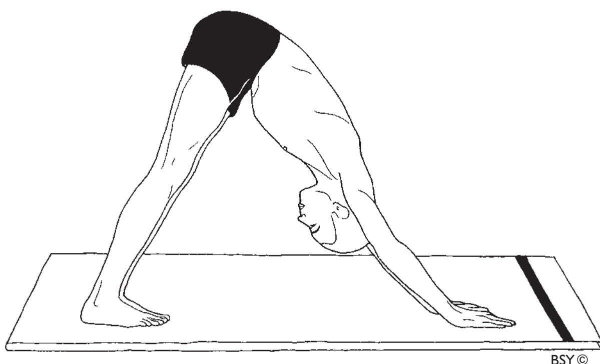
केहुनियों को सीधा करते हुए पीठ को धनुषाकार बनाएँ। सीने को सामने की ओर लाते हुए सिर को थोड़ा पीछे की ओर मोड़ें, जिससे साँप के समान आकृति बन जाए।

पैर तथा पेट का निचला भाग जमीन पर रहेगा, भुजाओं से धड़ को सहारा दें।

जब तक रीढ़ की हड्डी में बहुत लचीलापन न हो तब तक भुजाओं को थोड़ा मोड़ कर रखें।

इस स्थिति में रीढ़ की हड्डी के निचले छोर पर पड़ने वाले तनाव पर अपनी सजगता को बनाए रखें।

श्वास – धड़ को ऊपर उठाते तथा मेरुदण्ड को धनुषाकार बनाते समय श्वास अन्दर लें।

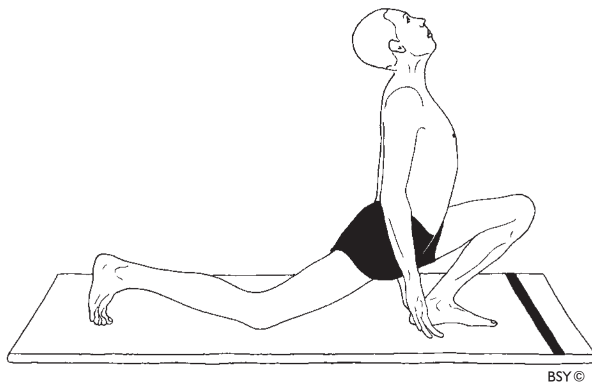


स्थिति 8: पर्वतासन

यह स्थिति 5 की पुनरावृत्ति है।

भुजाओं और पैरों को सीधा रखिये। नितम्बों को उठाते हुए पर्वतासन में आइए। सिर को स्थिति 5 के समान दोनों भुजाओं के बीच में लाइए। हाथ और पैर स्थिति 7 की जगह से हिले नहीं। नितम्बों को ऊपर उठाइए और एड़ियों को जमीन पर टिकाइए।

श्वास – नितम्बों को उठाते समय श्वास बाहर छोड़िये।

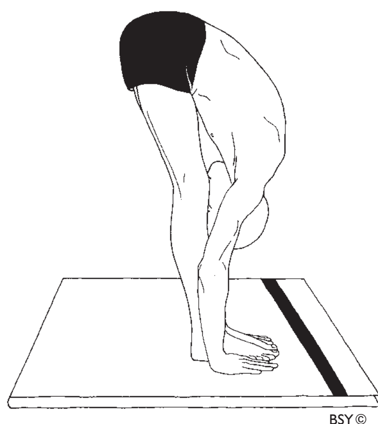


स्थिति 9: अश्वसंचालन

यह स्थिति 4 की पुनरावृत्ति है।

बाएँ पैर को आगे लाकर दोनों हाथों के बीच में रखिए। साथ ही दायें घुटने को जमीन से सटाइये और श्रोणी प्रदेश को आगे की ओर तानिये। स्थिति 4 की तरह मेरुदण्ड को धनुषाकार बनाते हुए ऊपर की ओर देखिए।

श्वास – इस स्थिति में आते हुए श्वास अन्दर लीजिए।



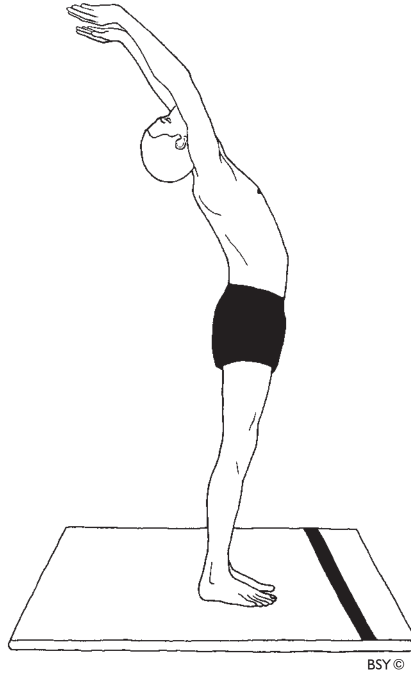
स्थिति 10: पादहस्तासन

यह स्थिति 3 की पुनरावृत्ति है।

दाएँ पैर को बाएँ पैर की बगल में ले आइए। पैरों को सीधा करते हुए आगे की ओर झुकिये तथा नितम्बों को उठाते हुए सिर को घुटने के पास लाने का प्रयत्न कीजिए। हाथों को पैरों के पास जमीन से सटा कर रखिए।

यह स्थिति 3 की तरह ही है।

श्वास – इस स्थिति में आते हुए श्वास बाहर छोड़िये।

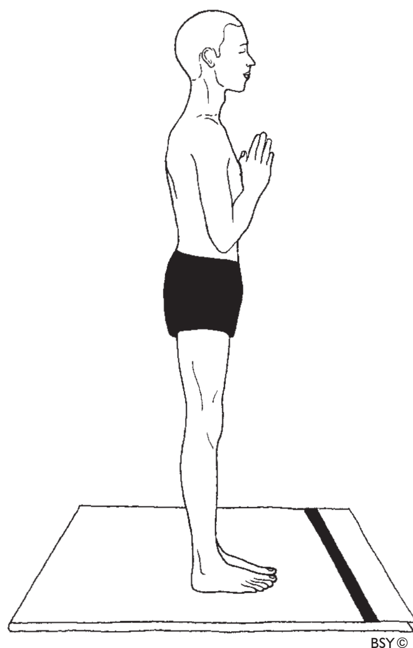


स्थिति 11: हस्त उत्तानासन

यह स्थिति 2 की पुनरावृत्ति है।

धड़ को नितम्बों से ऊपर उठाते हुए शरीर को सीधा कीजिए, हाथों को सिर के ऊपर से ले जाते हुए पीछे की ओर मोड़िये। शरीर के पिछले हिस्से को धनुषाकार बनाते हुए स्थिति 2 को दोहराइये।

श्वास – धड़ और हाथों को ऊपर उठाते समय श्वास अन्दर लीजिए।



स्थिति 12: प्रणामासन

यह स्थिति 1 की पुनरावृत्ति है।

शरीर को सीधा रखते हुए, दोनों हाथों को स्थिति 1 की तरह नमस्कार की मुद्रा में जोड़कर छाती के सामने रखिये।

श्वास – अन्तिम स्थिति में आते हुए श्वास बाहर छोड़िये।

नोट– यह सूर्य नमस्कार की आधी आवृत्ति है। इसकी 1 आवृत्ति पूर्ण करने के लिए उन्हीं आसनों की पुनरावृत्ति की जाती है, परन्तु इसमें स्थिति 4 तथा 9 में दायाँ पैर पीछे रहता है। इस प्रकार एक आवृत्ति के लिये कुल 24 स्थितियाँ (12-12 आसनों के 2 समूह) हैं। इनसे प्रत्येक आधी आवृत्ति करने के पश्चात् शरीर के दायीं और बायीं ओर संतुलन की स्थिति आती है। जब बारहवीं स्थिति पूरी हो जाए तब हाथ को बगल में नीचे ले जाते हुए श्वास अन्दर लें तथा कुछ सेकण्ड रुकने के पश्चात् श्वास बाहर छोड़ते हुए शेष आधी आवृत्ति पूरी करें।

आदर्श रूप से सूर्य नमस्कार के अभ्यास में सभी 24 आसनों को बिना रूके एक ही बार में पूरा करना चाहिये तथा सही श्वास-प्रक्रिया का ध्यान रखना चाहिये। परन्तु यदि आपको बीच में थकान का अनुभव हो तो शेष अंश प्रारम्भ करने के पूर्व गहरी श्वास लेकर विश्राम करें। अपनी सजगता श्वास पर बनाये रखें। आसनों के बीच या दो आवृत्तियों के बीच थकान होने पर भी इसी प्रकार विश्राम करें। स्वयं से पूछें– मुझे कैसा लग रहा है? इस प्रकार जो उत्तर आपको अपने से मिले, उसके अनुसार अगली आवृत्तियाँ करें। किसी भी हालत में आसन करते समय आपको कष्ट की अनुभूति नहीं होनी चाहिये और हर हालत में आपकी श्वास गहरी रहनी चाहिये।

सुझाव एवं निर्देशन

'सूर्य नमस्कार' का सफलतापूर्वक अभ्यास करने हेतु निम्नलिखित तथ्यों को ध्यान में रखना आवश्यक है–

सम्भवतया सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य है–तनाव की स्थिति से बचना। प्रत्येक गति में कम-से-कम प्रयास लगना चाहिये। केवल उन्हीं मांसपेशियों का इस्तेमाल किया जाना चाहिये, जो आसन विशेष के लिये आवश्यक हैं। शरीर के शेष अंग एकदम शिथिल अवस्था में होने चाहिये। प्रत्येक स्थिति में अधिक-से-अधिक शिथिल रहने का प्रयास करें। इस प्रकार आप अपने अंगों में भली प्रकार खिंचाव उत्पन्न कर पायेंगे। इस अभ्यास की प्रत्येक स्थिति अपनी पूर्व स्थिति से निकलती हुई प्रतीत होनी चाहिये–नृत्य की मुद्राओं के समान।

सूर्य नमस्कार के अभ्यास में मेरुदण्ड बारी-बारी से आगे तथा पीछे मुड़ता है। यह ध्यान रखें कि गर्दन भी मेरुदण्ड का एक भाग है, इसीलिये आसनों के क्रम में शारीरिक स्थितियों के अनुसार इसे भी आरामदायक स्थिति तक आगे तथा पीछे मोड़ने का प्रयास करें। इसके परिणामस्वरूप हर स्थिति में शरीर में अधिकतम खिंचाव उत्पन्न होगा।

कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

1. अभ्यास के प्रारम्भ में सम्पूर्ण अभ्यास को एक साथ कर सकने में कठिनाई का अनुभव हो सकता है। इसलिये प्रारम्भ में इसके एक-एक आसन का अलग से अभ्यास करते हुए उसमें पूर्णता प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये। अधिकतर लोगों के लिये स्थिति 3 से स्थिति 4 में आना कठिन होता है, इसलिये उचित होगा कि सम्पूर्ण अभ्यास को दो भागों में बाँट

कर किया जाये। प्रथम भाग में स्थिति 1, 2, 3, 10, 11 तथा 12 का एवं द्वितीय भाग में 4, 5, 6, 7, 8 तथा 9 का अभ्यास किया जा सकता है। इन दोनों भागों में अलग-अलग दक्षता प्राप्त करने के उपरान्त बिना किसी कठिनाई के पूरा अभ्यास एक साथ किया जा सकता है।

2. पादहस्तासन (स्थिति 3 तथा 10) में पैर एकदम सीधे रहने चाहिये। सम्भव है, प्रारम्भ में यह आसन ठीक से न किया जा सके, परन्तु नियमित अभ्यास से धीरे-धीरे कमर और पैरों की नसों तथा मांसपेशियों में खिंचाव आता जायेगा, जिसके फलस्वरूप अभ्यास में पूर्णता आती जायेगी।
3. स्थिति 3 (पादहस्तासन) में पैर के दोनों ओर भूमि पर रखे गये हाथों को, स्थिति 10 (पादहस्तासन) में वापस लौटने तक तथा स्थिति 5 (पर्वतासन) में रखे गये पैरों को, स्थिति 8 (पर्वतासन) में लौटने तक अपनी जगह से हिलायें नहीं। यदि हाथों तथा पैरों को सही स्थिति में रखा गया है तो बीच में उन्हें हिलाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।
4. अश्व संचालनासन (स्थिति 4 तथा 9) में पीछे की ओर बढ़े हुए पैर का घुटना जमीन से सटाकर रखें। दूसरा पैर दोनों हाथों के बीच में रहेगा।
5. पर्वतासन (स्थिति 5 तथा 8) में एड़ी को भूमि से सटाने का प्रयास करें। यद्यपि प्रारम्भ में यह कठिन लगेगा, परन्तु धीरे-धीरे घुटनों के पीछे नसों व मांसपेशियों में खिंचाव आने के परिणामस्वरूप एड़ी भूमि से सटने लगेगी।
6. स्थिति 5 (पर्वतासन) से स्थिति 8 (अष्टांग नमस्कार) में जाते समय बहुधा कठिनाई की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। निम्नांकित सुझाव पर ध्यान दें – पहले घुटनों को इतना मोड़ें कि वे भूमि का स्पर्श करने लगें। इसके पश्चात् धड़ को नीचे ले जाते हुए कुहनियों को इतना मोड़ें कि वक्ष तथा ठुड्ढी भी जमीन को स्पर्श करने लगे। इसके परिणामस्वरूप मेरुदण्ड धुनषाकार हो जायेगा तथा नितम्ब भूमि से थोड़े ऊपर उठे रहेंगे।

   इसी प्रकार स्थिति 7 (भुजंगासन) में जाते समय पैरों को सीधा करते हुए इतना आगे ले जाइये कि शरीर भूमि पर सीधा हो जाये। पुन: हाथों की सहायता से धड़ को उठाते हुए भुजंगासन की स्थिति में आइये। इसी प्रकार अन्य आसनों को क्रमानुसार छोटी-छोटी स्थितियों में विभाजित करके अभ्यास करें।
7. मंदगति से अभ्यास करने पर अथवा प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिये स्थिति 6 (अष्टांग नमस्कार) में श्वास बाहर रोके रखना कठिन हो सकता है। अत:

ऐसी अवस्था में स्थिति 6 से होते हुए, परन्तु वहाँ रुके बिना स्थिति 7 में जायें अर्थात् स्थिति 5 और 6 में कुछ सेकण्ड ही रुकें अथवा स्थिति 6 में यदि रुकना ही चाहें तो सुविधानुसार श्वास की स्थिति बना लें।

8. वृद्ध तथा दुर्बल लोगों को स्थिति 7 (भुजंगासन) से स्थिति 8 (पर्वतासन) में आने में कठिनाई हो सकती है। ऐसी स्थिति में उन्हें चाहिये कि वे सबसे पहले हाथों को सीधा करते हुए घुटनों को जमीन पर ही रहने दें (मार्जारि आसन की तरह) फिर पर्वतासन में वापस लौटें। इससे उन्हें काफी आसानी हो जायेगी।
9. यदि 12 आसनों के आधे चक्र को पूरा करना बहुत कठिन लगे, तो मात्र 9 आसनों का ही आधा चक्र किया जा सकता है, जिसमें स्थिति 1, 2, 3, 4, 5 तथा 9, 10, 11, 12 ही सम्मिलित होंगी। स्थितियाँ 6 तथा 7 को छोड़ा जा सकता है।

आवृत्तियों की संख्या

यद्यपि आवृत्तियों की संख्या नियत कर सकना सम्भव नहीं है, फिर भी यह तथ्य ध्यान में रखना आवश्यक है कि मात्र उतनी ही आवृत्तियाँ की जानी चाहिये जिनसे थकान न हो। अभ्यासी को अपनी शारीरिक स्थिति तथा सीमाओं को ध्यान में रखते हुए ही आवृत्तियों की संख्या निर्धारित करनी चाहिये। यह ध्यान में रखें कि सूर्य नमस्कार एक शक्तिशाली अभ्यास है जिसे क्षमता से अधिक करने पर दुष्परिणाम सामने आ सकते हैं, जैसे – शरीर में दर्द, सूजन, फोड़े-फुंसियाँ, ददोरे, सर्दी-जुकाम या पतले दस्त। ऐसी स्थिति में पूर्ण विश्राम लेना चाहिये। तब ये लक्षण स्वत: धीरे-धीरे समाप्त हो जायेंगें।

सामान्यतया इसे 2 से 3 आवृत्तियों से प्रारम्भ करके धीरे-धीरे 12 आवृत्तियों तक ले जा सकते हैं। अच्छा हो, यदि पहली 6 आवृत्तियों को धीरे-धीरे तथा उसके बाद 6 आवृत्तियों को शीघ्रतापूर्वक किया जाये। पुराने तथा नियमित अभ्यासी इसे प्रतिदिन 24 से 54 आवृत्तियों तक कर सकते हैं। कुछ विशेष परिस्थितियों में (जैसे – किसी रोग में या रक्त के शुद्धिकरण हेतु) इसकी आवृत्तियाँ 108 तक बढ़ाई जा सकती हैं परन्तु ऐसा किसी योग्य शिक्षक के निर्देशन में ही करना चाहिये। निर्धारित आवृत्तियों को पूरा करने के पश्चात् अभ्यासी को शिथिलन हेतु कुछ मिनटों तक शवासन का अभ्यास करना चाहिये।

अभ्यास कब तथा कहाँ करें?

सूर्य नमस्कार करने का सर्वश्रेष्ठ समय सूर्योदय है। इस समय वातावरण शान्त होता है तथा उसमें सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणें भी रहती हैं। ये दोनों बातें शरीर के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

ब्रह्ममुहूर्त में उठने का प्रयत्न करें तथा शौचादि से निवृत्त होने के पश्चात् स्नान करके सूर्य नमस्कार का अभ्यास करें। यथासम्भव ढीले कपड़े पहन कर खुली हवा में इसका अभ्यास करें, जिससे त्वचा बिना किसी अवरोध के सूर्य ऊर्जा को ग्रहण कर सके।

कम्बल के ऊपर सूर्य की ओर मुख करके सूर्य नमस्कार का अभ्यास करना उत्तम है। यदि किसी कारण इसका अभ्यास प्रात:काल करना सम्भव न हो तो दिन में कभी खाली पेट किया जा सकता है। इस स्थिति में किसी प्रकार का आहार ग्रहण करने के कम से कम चार घण्टे बाद ही अभ्यास करें। शाम को खाने के पूर्व भी यह अभ्यास किया जा सकता है, क्योंकि यह जठराग्नि को उत्तेजित करता है।

शारीरिक कड़ेपन से मुक्ति

कभी-कभी शरीर में कड़ेपन अथवा किसी संरचनात्मक दोष के परिणामस्वरूप अभ्यास को ठीक से कर पाना सम्भव नहीं होता। ऐसी स्थिति में कुछ अन्य प्रकार के अभ्यासों को तब तक करना चाहिये जब तक शरीर में पर्याप्त लोच न आ जाये या संरचनात्मक दोष समाप्त न हो जायें।

शरीर में लोच का अभाव (कड़ापन) निम्नलिखित तीन मुख्य कारणों से सम्भव है –

1. पेशीय तनाव अथवा मांसपेशियों का स्थूल होना,
2. नसों तथा स्नायुओं में कड़ापन तथा
3. जोड़ों में विषाक्त पदार्थों का जमा हो जाना।

नियमित रूप से तनावरहित होकर मंद गति से सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने पर इन समस्याओं से मुक्ति पाना सम्भव है। जो लोग कसरत करते हैं, उन्हें इस बात का भय नहीं होना चाहिये कि इसके अभ्यास से शक्ति कम हो जायेगी। सूर्य नमस्कार से पेशियों में लचीलापन आता है तथा उनका प्रभावशाली ढंग से उपयोग होता है। मांसपेशियों की संरचना में समन्वय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिससे शरीर की शक्ति में वृद्धि होती है।

सूर्य नमस्कार की प्रत्येक स्थिति में कुछ देर तक रहने से नसों तथा पेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता है जिसके परिणामस्वरूप शरीर में क्रमश: लोच आता जाता है।

जोड़ों को नित्य अभ्यास तथा उपयुक्त आहार, विशेषकर शाकाहार के द्वारा लचीला बनाया जा सकता है। आहार में नमक की मात्रा कम कर देने से भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। अत्यंत कड़ी शारीरिक संरचना वाले व्यक्तियों के लिये उचित है कि वे सूर्य नमस्कार प्रारम्भ करने के पूर्व पवनमुक्तासन समूह का अभ्यास करें।

सीमाएँ

सूर्य नमस्कार प्रत्येक आयु के लोगों के लिये समान रूप से उपयुक्त है। परन्तु अधिक वय के लोगों को तनाव से बचना चाहिये। सिद्धांतत: 8 वर्ष आयु के बच्चों के लिये यह अभ्यास आवश्यक नहीं है।

उच्च रक्तचाप या हृदय धमनी से संबंधित बीमारी या हृदयाघात से पीड़ित व्यक्तियों को सूर्य नमस्कार का अभ्यास नहीं करना चाहिये, क्योंकि इससे वाहिका संस्थान अथवा दुर्बल हृदय पर दुष्प्रभाव की संभावना रहती है। आँतों में टी.बी. अथवा हार्निया की दशा में भी यह अभ्यास वर्जित है।

मेरुदण्ड की किसी समस्या से ग्रस्त व्यक्तियों को इस अभ्यास का प्रारम्भ करने के पूर्व डॉक्टर की राय ले लेनी चाहिये। यद्यपि मेरुदण्ड से संबंधित अनेक समस्याओं का निदान मात्र इस अभ्यास द्वारा सम्भव है, फिर स्लिप्ड डिस्क तथा सायटिका जैसी बीमारियों में अन्य आसन समूह अधिक प्रभावशाली सिद्ध होते हैं।

अधिकतर महिलाओं के लिए मासिक धर्म की अवधि में भी सूर्य नमस्कार लाभदायक सिद्ध हुआ है, परन्तु कष्टप्रद मासिक होने की दशा में इसका अभ्यास न करना ही उचित है। गर्भावस्था में 12 वें सप्ताह के अन्त तक सूर्य नमस्कार का अभ्यास किया जा सकता है। प्रसव के पश्चात् 40 दिन तक इसका मंद गति से अभ्यास करने से गर्भाशय की पेशियाँ ठीक से काम करने लगती हैं।

सूर्य नमस्कार के अभ्यास में शरीर पर आवश्यकता से अधिक जोर न डालना एक महत्त्वपूर्ण बात है। इसके नियमित अभ्यास से अपनी क्षमताओं तथा सीमाओं का बोध होता है तथा व्यक्ति तदनुरूप कार्य करने में सक्षम होता है। शरीर के प्रति संवेदनशीलता का विकास कर हम सूर्य नमस्कार के अभ्यास का उपयोग अपनी सजगता को बढ़ाने तथा शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिए कर सकते हैं।

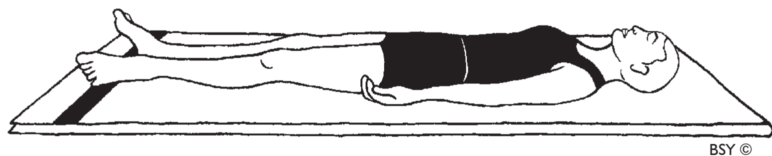
शवासन

सूर्य नमस्कार समाप्त करने के उपरान्त श्वास की सजगता के साथ शवासन का अभ्यास करना चाहिये। पूर्ण शिथिलीकरण की एक यौगिक विधि के रूप में शवासन का अभ्यास करने से तनावों को दूर करने में सहायता मिलती है। शवासन का शाब्दिक अर्थ है – 'शव की स्थिति में रहना'। इस शिथिलीकरण के अभ्यास में शरीर को तनावरहित करने हेतु सजग रहते हुए शरीर को शव की भाँति शिथिल कर दिया जाता है। शवासन के कुछ मिनटों के अभ्यास से शरीर तथा मन दोनों ही तनावमुक्त होकर स्फूर्ति से भर जाते हैं।

सूर्य नमस्कार के पश्चात् शिथिलीकरण का अभ्यास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इससे शरीर को पुनर्व्यवस्थित करने तथा रक्त में मिल गए विषाक्त पदार्थों को निकालने में सहायता मिलती है। इस अभ्यास में शारीरिक श्रम होने के कारण श्वास तथा हृदय गति बढ़ जाती है, परिणामस्वरूप अनुकम्पी स्नायुमंडल में उत्तेजना आ जाती है, जो शवासन के पश्चात् परानुकम्पी स्नायुमंडल की क्रियाशीलता के कारण सामान्य अवस्था में आ जाती है। स्पष्टतया सूर्य नमस्कार तथा शवासन के संयुक्त अभ्यास से स्वसंचालित स्नायुमंडल के दोनों पक्षों में उद्दीपन होता है और इसका परिणाम होता है शरीर के ओज में वृद्धि। शवासन में अभ्यासियों को तब तक रहना चाहिये, जब तक उन्हें यह स्पष्ट आभास न हो जाये कि उनकी श्वास तथा हृदय गति सामान्य हो चुकी हैं तथा सारी मांसपेशियाँ पूर्णतया तनावमुक्त हैं।

विधि

सूर्य नमस्कार का अभ्यास समाप्त होने पर खड़े-खड़े मूल स्थिति में ही कुछ सैकण्ड तक गहन श्वसन करने के उपरान्त शवासन में पीठ के बल लेट



जायें। पैरों में थोड़ा अन्तर बनाये रखें, हथेलियों को ऊपर रखते हुए बगल में शरीर से थोड़ी दूरी पर रखें तथा आँखों को सहज रूप से बन्द कर लें। अन्त में अपने शरीर को आवश्यकतानुसार हिला-डुला कर आरामदायक स्थिति में आ जायें। अब एकदम निश्चल रहते हुए मन तथा शरीर को तनावरहित करते हुए उसे शिथिल एकदम होने दें।

अब आपको इस पूरे अभ्यास में इसी स्थिति में रहते हुए बिना शारीरिक हलचल के तथा बिना जोर लगाए चेतना को एक-एक करके शरीर के विभिन्न अंगों पर ले जाना है।

अब अपनी सजगता को अपने पैरों पर ले जायें। शरीर को हिलायें या ताने नहीं। इस बात का अनुभव करें कि पैरों में तनाव है या नहीं। यदि है तो सजगतापूर्वक पैरों को शिथिल करें।

जब आपका पैर पूरी तरह शिथिल हो जाता है तो अपनी चेतना को टखने तथा पैरों के निचले भाग पर ले जायें। इन अंगों को भी उसी प्रकार शिथिल करें। इसी प्रकार अपनी चेतना को घुटनों, जाँघों तथा नितम्बों पर ले जायें। कुछ सैकण्ड तक रुकें तथा अनुभव करें कि कमर से नीचे का अंग एकदम शिथिल हो चुका है।

तत्पश्चात् एक-एक करके ऊपर के अंगों में चेतना ले जायें–निम्न उदर, नाभि, उदर का ऊपरी भाग, वक्ष, पीठ, हथेलियाँ, निचली भुजा, कोहनियाँ, ऊपरी भुजायें तथा कंधे। अब पुन: थोड़ी देर तक रुकें तथा यह आश्वस्त हो लें कि कंधों से नीचे का सम्पूर्ण शरीर पूर्णत: शिथिल हो चुका है। इस प्रक्रिया में यदि आप किसी अंग में किसी प्रकार के तनाव का अनुभव करें तो उस तनाव के प्रति थोड़ी देर के लिये सजग हो जायें। इससे तनाव समाप्त हो जायेगा।

अब अपनी सजगता को क्रमश: गले, ठुड्ढी, मुँह, नाक, गाल, कान, आँख, मस्तक, सिर के ऊपरी भाग, सिर के पिछले भाग तथा समूचे सिर पर ले जायें।

अन्त में सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें। इस समय अनुभव करें कि सम्पूर्ण शरीर शिथिल होकर एक शव की भाँति निर्जीव की तरह पड़ा है। यह शवासन द्वारा प्राप्त होने वाली पूर्ण शिथिलन की अवस्था है। सिर से पैर तक चेतना को घुमाने की सम्पूर्ण प्रक्रिया में मात्र कुछ मिनट लगते हैं। आवश्यकता पड़ने पर समयानुसार इसे कई बार दुहरायें तथा असीम शांति का अनुभव करें।

अतीन्द्रिय श्वसन के साथ शवासन

शवासन में अतीन्द्रिय पथों में श्वास प्रक्रिया के प्रति सजगता भी एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास है। शरीर में अनेक सूक्ष्म पथ हैं जिनमें प्राण का प्रवाह होता है। बहिर्मुखी होने के कारण हम इस प्रवाह का अनुभव नहीं कर पाते। परन्तु अपनी श्वास के प्रति सजगता बढ़ाकर हम इन सूक्ष्म शक्तियों का अनुभव कर सकते हैं, जो हमारे अन्दर स्वास्थ्य, शारीरिक एवं मानसिक क्रियाकलाप तथा स्वयं जीवन के रूप में प्रकट होती हैं, विशेषकर सूर्य नमस्कार के अभ्यास के पश्चात्।

विधि

शवासन में पूरे शरीर को स्थिर तथा शिथिल रखते हुए अपनी सहज श्वास प्रक्रिया के प्रति सजग हो जायें। अपनी श्वसन क्रिया में किसी प्रकार का परिवर्तन न लायें। मात्र अपनी सजगता को शरीर से हटा कर श्वास पर ले आयें। हर आने-जाने वाली श्वास के प्रति पूर्ण रूप से सजग रहें। साथ-ही-साथ इस बात के प्रति भी सजग रहें कि श्वास लेते व छोड़ते समय फेफड़े फैलते और सिकुड़ते हैं, पेट ऊपर और नीचे होता है। एक भी श्वास आपकी जानकारी के बिना न अन्दर जाने पाये और न बाहर आने पाये। जल्दी ही आप अनुभव करेंगे कि आपका मन शिथिल हो गया है और श्वसन प्रक्रिया में रम गया है।

अब आप अतीन्द्रिय श्वसन क्रिया करने के लिये तैयार हैं। अपने मन को नाभि पर केन्द्रित करें तथा यह कल्पना करें कि गले और नाभि के मध्य श्वास के आने-जाने के लिए एक सूक्ष्म छोटा मार्ग है। श्वास अन्दर लेते समय यह अनुभव करें कि श्वास इस मार्ग द्वारा नाभि से गले की ओर ऊपर बढ़ रही है। इसी प्रकार श्वास छोड़ते समय अनुभव करें कि श्वास गले से नाभि तक उसी मार्ग से नीचे आ रही है।

अब नाभि से गले तक तथा गले से नाभि तक आने-जाने वाली प्रत्येक श्वास की गणना प्रारम्भ करें। एक पूर्ण श्वसन प्रक्रिया (पूरक व रेचक) को एक गिनती मानते हुए 50 से 0 तक उल्टी गिनती गिने, अर्थात् 50 पूरक, 50 रेचक 49 पूरक, 49 रेचक ; 48 पूरक, 48 रेचक आदि। यदि किसी श्वास को गिनना भूल जायें तो पुन: नये सिरे से 50 से गणना प्रारम्भ करें।

अनुलोम-विलोम श्वसन

अब नाभि तथा गले के मध्य से अपनी सजगता हटाकर नासिका पर ले आयें। श्वास लेने के साथ अपनी सजगता बायें नासिका छिद्र पर ले जाते हुए अनुभव करें कि श्वास मात्र बायें नासिका छिद्र से अन्दर आ रही है तथा श्वास छोड़ने के साथ यह अनुभव करें कि श्वास दायें नासिका छिद्र से बाहर निकल रही है। दूसरी श्वास आवृत्ति में सजगता का क्रम उलट दें, अर्थात् श्वास लेते समय दायें नासिका छिद्र से श्वास अन्दर जाने तथा श्वास छोड़ते समय बायें नासिका छिद्र से श्वास बाहर आने की सजगता को विकसित करें। यह एक आवृत्ति है। कुल पचास आवृत्तियाँ करें। 50 से 0 तक उल्टी गिनती गिनिये, यथा बायाँ पूरक 50, दायाँ रेचक 50, दायाँ पूरक 49, बायाँ रेचक 49; बायाँ पूरक 48, दायाँ रेचक 48 आदि। यदि बीच में गिनती गिनना भूल जायें तो फिर 50 से प्रारम्भ करें।

गिनती गिनने के पश्चात् सजगता श्वास से शरीर पर ले आयें, मानसिक रूप से 3 बार ॐ का उच्चारण करें। उठकर बैठ जायें और आँखें धीरे-से खोल दें।

चक्र

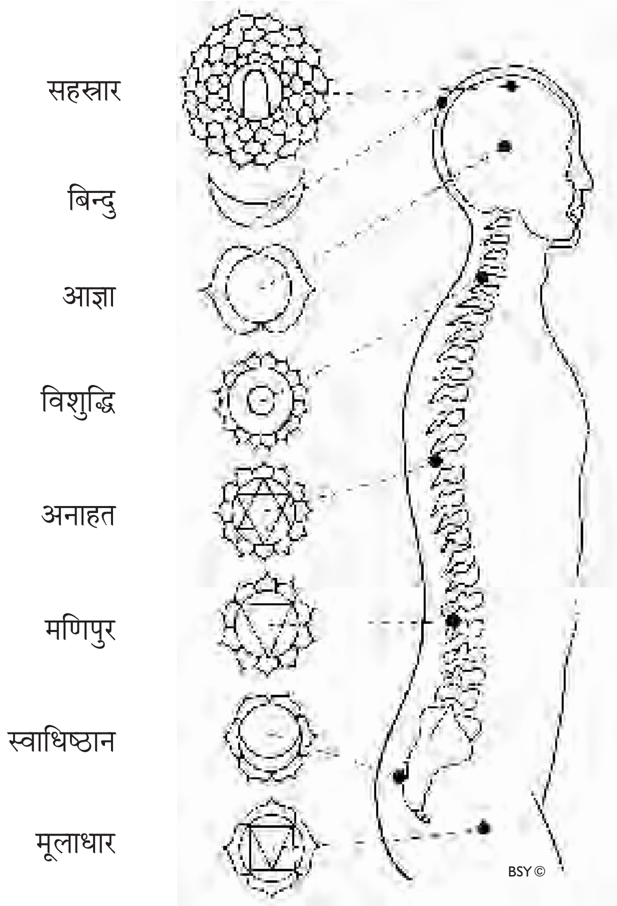
मानव के स्थूल शरीर में सात प्रमुख अतीन्द्रिय केन्द्र हैं, जिन्हें योग की भाषा में चक्र कहा जाता है। स्थूल रूप में इनका प्रकटीकरण स्नायविक जालकों तथा अंत:स्रावी ग्रंथियों के रूप में होता है। सूर्य नमस्कार के अभ्यास में सजगता व एकाग्रता के विकास हेतु इन चक्रों पर मन को केन्द्रित किया जाता है। चक्रों पर मन को एकाग्र करने के परिणामस्वरूप चक्रों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है जिससे अतीन्द्रिय तथा आध्यात्मिक शक्तियों का जागरण होता है। चूँकि एकाग्रता के इस अभ्यास से सजगता में आशातीत वृद्धि होती है, अत: इससे स्थूल शरीर से संबंधित अंग भी लाभान्वित होते हैं।

किसी आसन का अभ्यास करते समय चक्रों से सह-सम्बद्ध शारीरिक अवयवों पर पड़ने वाले संकुचन के परिणामस्वरूप संबंधित चक्र में भी उद्दीपन होता है। इस क्रिया के माध्यम हैं – स्नायु तथा अंत:स्रावी अवयवों में संकुचन, उद्दीपन तथा पुनर्संतुलन। परन्तु सूर्य नमस्कार के अभ्यास में चक्रों के उद्दीपन के प्रमुख उत्तरदायी घटक हैं – आंतरिक सजगता, एकाग्रता तथा मानस दर्शन में वृद्धि।

आसनों के अभ्यास से होने वाले शारीरिक उद्दीपन के कारण प्राण शक्ति में वृद्धि होती है। इससे चक्रों की स्थिति पर मानसिक तथा शारीरिक ऊर्जा को एकाग्र करने में सहायता मिलती है। इन आवेशित शारीरिक अंगों (चक्रों) के प्रति मानसिक रूप से सजग होने से मन तथा शरीर, इड़ा तथा पिंगला में सामंजस्य स्थापित होता है, जिससे चक्रों में उद्दीपन उत्पन्न होता है। इसकी परिणति होती है आध्यात्मिक जागृति में।

अभ्यास के प्रारम्भिक चरणों, अर्थात् आसन-प्राणायाम में निपुणता प्राप्त कर लेने के बाद चक्रों पर मन को एकाग्र करने का अभ्यास किया जा सकता

चक्रों की स्थिति



है। परन्तु इसके लिये इस तथ्य का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है कि हमारे शरीर में चक्र कहाँ-कहाँ स्थित हैं।

चक्रों की स्थिति

मूलाधार – मूलाधार की स्थिति स्त्री तथा पुरुष में अलग-अलग होती है। पुरुषों में यह जननेन्द्रिय तथा मल द्वार के बीच और स्त्रियों में गर्भाशय तथा ग्रीवा के पीछे है।

स्वाधिष्ठान – इसकी स्थिति मेरुदण्ड के सेक्रमी (सैक्रल) क्षेत्र में होती है। इसका उद्दीपन बिन्दु शरीर के सामने जघनास्थि के ठीक ऊपर होता है।
मणिपुर – यह नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड में स्थित है। स्वयं नाभि इसका उद्दीपन बिन्दु है।
अनाहत – यह मेरुदण्ड में वक्षस्थल की उरोस्थि के पीछे स्थित है। इसका उद्दीपन बिन्दु उरोस्थि पर ही स्थित है।
विशुद्धि – गले के पीछे मेरुदण्ड में स्थित है। इसका उद्दीपन बिन्दु कंठ-कूप है।
आज्ञा – सिर के मध्य में भ्रूमध्य बिन्दु तथा खोपड़ी के पिछले भाग के बीचों-बीच स्थित है। इसका उद्दीपन बिन्दु भ्रूमध्य है।

चूँकि सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते समय एकाग्रता उपर्युक्त चक्रों पर ही की जाती है, इसलिये यहाँ पर अन्य चक्रों का विवरण नहीं दिया जा रहा है। सूर्य नमस्कार की विभिन्न स्थितियों में जिन-जिन चक्रों में उद्दीपन होता है, उनका वर्णन इस प्रकार है –

1. प्रणामासन	अनाहत चक्र
2. हस्तउत्तानासन	विशुद्धि चक्र
3. पादहस्तासन	स्वाधिष्ठान चक्र
4. अश्व संचालनासन	आज्ञा चक्र
5. पर्वतासन	विशुद्धि चक्र
6. अष्टांग नमस्कार	मणिपुर चक्र
7. भुजंगासन	स्वाधिष्ठान चक्र
8. पर्वतासन	विशुद्धि चक्र
9. अश्व संचालनासन	आज्ञा चक्र
10. पादहस्तासन	स्वाधिष्ठान चक्र
11. हस्तउत्तानासन	विशुद्धि चक्र
12. प्रणामासन	अनाहत चक्र

चक्रों की स्थिति का ज्ञान

अभ्यासी द्वारा सूर्य नमस्कार के समय जिस स्थिति से जो चक्र संबंधित होता है, उसका पता लगाने का प्रयत्न किया जाता है। इस उद्देश्य से प्रारम्भ में हर स्थिति में कुछ अधिक समय तक रुकना चाहिये। जैसे-जैसे चक्रों

की सही स्थिति का पता लगाने का अभ्यास होता जायेगा; अभ्यास में तेजी आती जायेगी।

जैसे-जैसे चक्रों के प्रति सजगता का विकास होता जायेगा और उनका मानस दर्शन स्पष्ट होता जायेगा वैसे-वैसे आसन से संबंधित श्वसन तथा चक्रों पर सजगता की क्रियायें भी साथ-ही-साथ हो सकेंगी। श्वास की सहायता से चक्रों को उद्दीप्त करना संभव है। उदाहरणार्थ – इस बात का मानस दर्शन करें कि जब आप श्वास लेते हैं तो अतीन्द्रिय श्वास चक्र से होते हुए शरीर के अन्दर प्राण ले जा रही है तथा जब आप श्वास छोड़ते हैं तब अतीन्द्रिय श्वास शरीर से बाहर निकल रही है। कुम्भक के समय मणिपुर चक्र में प्राण तथा अपान के मिलने के प्रति सजग होइये।

निस्संदेह इस प्रकार के उच्च अभ्यास योग्य निर्देशन में ही सीखकर किये जाने चाहिये। यदि इस स्तर पर सूर्य नमस्कार का अभ्यास किया जाता है तो यह कुंडलिनी योग जैसे महत्त्वपूर्ण तांत्रिक अभ्यास की प्रारम्भिक तैयारी का एक भाग बन जाता है।

सूर्य नमस्कार के अभ्यास में मूलाधार को छोड़कर सभी प्रमुख चक्रों पर मन को एकाग्र किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप मूलाधार से कुंडलिनी जागरण के लिये दूसरे चक्र भी उद्दीपित होते हैं। चूँकि मूलाधार चक्र के जागरण का संबंध अचेतन तथा अत्यन्त प्रभावशाली शक्तियों से होता है, इसलिये इसका जागरण होने पर इसकी शक्ति के वेग को सहन करने के लिये शरीर का स्वस्थ तथा शक्तिशाली होना आवश्यक है। सूर्य नमस्कार इस स्थिति के लिये आपको तैयार करता है, आपकी जीवनीशक्ति को बढ़ाता है। इसके बाद उपयुक्त अवसर आने पर मूलाधार को जाग्रत करने के लिये दूसरे अभ्यास भी किये जा सकते हैं।

चक्रों पर एकाग्रता के समय मंत्रों के मानसिक उच्चारण को भी संयुक्त किया जा सकता है। अभ्यास में पूर्णता आने के पश्चात् ऐसा अनुभव होगा कि मंत्र के स्पन्दन इन्हीं चक्रों से निकल रहे हैं।

सूर्य मंत्र

दो पदार्थों, जैसे, स्वर-रज्जुओं के आपस में घर्षण के परिणामस्वरूप बाह्य ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं और वातावरण में ध्वनियों में स्पन्दन व्याप्त हो जाता है। ये स्पन्दन कान में प्रवेश कर कान के पर्दे तथा उसमें उपस्थित द्रव में फिर स्पन्दन उत्पन्न करते हैं। इन स्पन्दनों का प्रसारण मस्तिष्क तक होता है, जहाँ पर पूर्वपरिचित ध्वनियों की स्मृति से उनकी तुलना की जाती है। तब इस ध्वनि का एक मानसिक बिम्ब बन जाता है। इस प्रकार ध्वनियाँ मस्तिष्क को निरन्तर प्रभावित करती रहती हैं।

मंत्र ऐसी ध्वनियों के समूह हैं, जिनसे मस्तिष्क तथा उसके क्रियाकलापों पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव पड़ता है। मंत्र का उच्चारण सस्वर, फुसफुसाकर अथवा मानसिक रूप से किया जा सकता है। परन्तु मानसिक उच्चारण ही सर्वोत्तम है। सजगता तथा एकाग्रता के साथ किसी ध्वनि को मानसिक रूप से दुहराने पर संबंधित विचार तथा वह ध्वनि एकरूप हो जाती है और इन विशिष्ट ध्वनियों में अन्तर्निहित ऊर्जा की अभिव्यक्ति मन में होती है।

मंत्र संस्कृत वर्णमाला के समूह हैं। इनके उच्चारण से विशेष प्रकार के स्पन्दन निश्चित गति से निकलते हैं। इनका चेतना पर भी प्रभाव पड़ता है। संस्कृत वर्णमाला के बावन वर्णों की ध्वनियों का ज्ञान वैदिक काल के मनीषियों को ध्यान की गहन अवस्था में हुआ था। आत्म-ज्ञान सम्पन्न इन मनीषियों ने सभी प्रकार की ध्वनि ऊर्जा (शब्द ब्रह्म – परम चेतना, जो ध्वनि के रूप में प्रकट होती है) के स्रोत का पता लगा लिया था।

बारह सूर्य मंत्र

प्रत्येक वर्ष सूर्य बारह विभिन्न स्थितियों (कलाओं) से होकर अपना रास्ता तय करता है। इन स्थितियों को ज्योतिष में राशि कहते हैं। प्रत्येक राशि की अलग-अलग विशेषताएँ होती हैं तथा इनके आधार पर ही उनके नामकरण किये गये हैं। सूर्य नमस्कार के बारह सूर्य मंत्र इन बारह नामों से संबंधित हैं, जो इसकी बारह स्थितियों का अभ्यास करते समय दुहराये जाते हैं।

ये सूर्य मंत्र मात्र सूर्य के नाम ही नहीं हैं, अपितु इनकी ध्वनि उस मूलभूत शाश्वत शक्ति की वाहक है, जिसका प्रतिनिधित्व स्वयं सूर्य करता है। इन सूर्य मंत्रों को एकाग्रता के साथ उच्चारण करने से सम्पूर्ण मानसिक संरचना लाभान्वित होती है।

यद्यपि इन मंत्रों के बौद्धिक विश्लेषण का कोई महत्त्व नहीं है, फिर भी जो साधक इन मंत्रों को आध्यात्मिक प्रबोधन के स्रोत के साथ सम्बद्ध होने के साधन के रूप में उपयोग करना चाहते हैं, उनकी जानकारी के लिये इनके अर्थ स्पष्ट किये जा रहे हैं–

1. ॐ मित्राय नमः

(सबके मित्र को प्रणाम)

प्रथम स्थिति में समस्त जीवन के स्रोत को नमन किया जाता है। सूर्य, समस्त ब्रह्माण्ड का मित्र है, क्योंकि इससे पृथ्वी समेत सभी ग्रहों के अस्तित्व के लिये आवश्यक असीम प्रकाश, ताप तथा ऊर्जा प्राप्त होती है। पौराणिक ग्रंथों में मित्र को कर्मों के प्रेरक, धरा–आकाश के पोषक तथा निष्पक्ष व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया गया है। प्रात:कालीन सूर्य भी दिवस के कार्यकलापों को प्रारम्भ करने का आह्वान करता है तथा सभी जीव-जन्तुओं को अपना प्रकाश प्रदान करता है।

2. ॐ रवये नमः

(प्रकाशवान् को प्रणाम)

रवये का तात्पर्य है जो स्वयं प्रकाशवान है तथा सम्पूर्ण जीवधारियों को दिव्य आशीष प्रदान करता है। द्वितीय स्थिति में हस्तउत्तानासन में इन्हीं दिव्य आशीषों को ग्रहण करने के उद्देश्य से शरीर को प्रकाश के स्रोत की ओर ताना जाता है।

3.ॐ सूर्याय नमः

(क्रियाओं के प्रेरक को प्रणाम)

यहाँ सूर्य को ईश्वर के रूप में अत्यन्त सक्रिय माना गया है। प्राचीन वैदिक ग्रंथों में सात घोड़ों से जुते रथ पर सवार होकर सूर्य के आकाश गमन की कल्पना की गई है। ये सात घोड़े परम चेतना से निकलने वाली सप्त किरणों के प्रतीक हैं, जिनका प्रकटीकरण चेतना के सात स्तरों में होता है – भू (भौतिक), भुवः (मध्यवर्ती, सूक्ष्म, नक्षत्रीय), स्वः (सूक्ष्म, आकाशीय), मः (देव आवास), जनः (उन दिव्य आत्माओं का आवास, जो अहं से मुक्त हैं), तपः (आत्म-ज्ञान प्राप्त सिद्धों का आवास) और सत्यम् (परम सत्य)। सूर्य स्वयं सर्वोच्च चेतना का प्रतीक है तथा चेतना के सभी सात स्तरों को नियंत्रित करता है। देवताओं में सूर्य का स्थान महत्त्वपूर्ण है। वेदों में वर्णित सूर्य देवता का आवास आकाश में है। उसका प्रतिनिधित्व करने वाली अग्नि का आवास भूमि पर है।

4.ॐ भानवे नमः

(प्रदीप्त होने वाले को प्रणाम)

सूर्य भौतिक स्तर पर गुरु का प्रतीक है। इसका सूक्ष्म तात्पर्य है कि जिस प्रकार गुरु हमारी भ्रांतियों के अंधकार को दूर करता है – उसी प्रकार सबेरा होने पर रात्रि का अंधकार दूर हो जाता है। अश्व संचालनासन की स्थिति में हम उस प्रकाश की ओर मुँह करके अपने अज्ञानरूपी अंधकार की समाप्ति हेतु प्रार्थना करते हैं।

5.ॐ खगाय नमः

(आकाशगामी को प्रणाम)

समय का ज्ञान प्राप्त करने हेतु प्राचीन काल के सूर्य डायलों के प्रयोग से लेकर वर्तमान कालीन जटिल यंत्रों के प्रयोग तक के लंबे काल में समय का ज्ञान प्राप्त करने के लिये आकाश में सूर्य की गति को ही आधार माना गया है। हम इस शक्ति के प्रति सम्मान प्रकट करते हैं, जो समय का ज्ञान प्रदान करती है तथा उससे जीवन को उन्नत बनाने की प्रार्थना करते हैं।

6. ॐ पूष्णे नमः

(पोषक को प्रणाम)

सूर्य सभी शक्तियों का स्रोत है। एक पिता की भाँति वह हमें शक्ति, प्रकाश तथा जीवन देकर हमारा पोषण करता है। अष्टांग नमस्कार की स्थिति में हम शरीर के सभी आठ केन्द्रों को भूमि से स्पर्श करते हुए उस पालनहार को अष्टांग प्रणाम करते हैं। तत्त्वत: हम उसे अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को समर्पित करते हैं तथा आशा करते हैं कि वह हमें शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करे।

7. ॐ मरीचये नमः

(सूर्य रश्मियों को प्रणाम)

मरीच ब्रह्मपुत्रों में से एक है। परन्तु इसका एक अर्थ मृग-मरीचिका भी होता है। हम जीवनभर सत्य की खोज में उसी प्रकार भटकते रहते हैं, जिस प्रकार एक प्यासा व्यक्ति मरुस्थल में (सूर्य रश्मियों से निर्मित) मरीचिकाओं के जाल में फँसकर जल के लिये मूर्ख की भाँति इधर-उधर दौड़ता फिरता है।

पर्वतासन की स्थिति में हम सच्चे ज्ञान तथा विवेक को प्राप्त करने के लिये प्रार्थना करते हैं, जिससे हम सत् तथा असत् के अन्तर को समझ सकें।

8. ॐ आदित्याय नमः

(अदिति-सुत को प्रणाम)

विश्व जननी (महाशक्ति) के अनन्त नामों में एक नाम अदिति भी है। वही समस्त देवों की जननी, अनन्त तथा सीमारहित हैं। वह आदि रचनात्मक शक्ति है, जिससे सभी शक्तियाँ नि:सृत हुई हैं। अश्व संचालनासन (नवीं स्थिति) में हम उस अनन्त विश्व-जननी को प्रणाम करते हैं।

10. ॐ सवित्रे नमः

(सूर्य की उद्दीपन-शक्ति को प्रणाम)

सवित्र उद्दीपक अथवा जाग्रत करने वाला देव है। इसका संबंध सूर्य देव से स्थापित किया जाता है। सवित्र उगते हुए सूर्य का प्रतिनिधि है, जो मनुष्य को जाग्रत करता और क्रियाशील बनाता है। 'सूर्य' पूर्ण रूप से उदित सूरज का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके प्रकाश में सारे क्रियाकलाप होते हैं। सूर्य

नमस्कार की दसवीं स्थिति पादहस्तासन में सूर्य की जीवनदायिनी शक्ति की प्राप्ति हेतु सवित्र को प्रणाम किया जाता है।

11. ॐ अर्काय नमः

(प्रशंसनीय को प्रणाम)

अर्क का तात्पर्य है–ऊर्जा। सूर्य विश्व की शक्तियों का प्रमुख स्रोत है। ग्यारहवीं स्थिति, हस्तउत्तानासन में हम जीवन तथा ऊर्जा के इस स्रोत के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं।

12. ॐ भास्कराय नमः

(आत्मज्ञान-प्रेरक को प्रणाम)

सूर्य नमस्कार की अंतिम स्थिति प्रणामासन में अनुभवातीत तथा आध्यात्मिक सत्यों के महान् प्रकाशक के रूप में सूर्य को अपनी श्रद्धा समर्पित की जाती है। सूर्य हमारे चरम लक्ष्य–जीवन मुक्ति के मार्ग को प्रकाशित करता है। प्रणामासन में हम यह प्रार्थना करते हैं कि वह हमें यह मार्ग दिखाये।

बीज मंत्र

बारह मंत्रों के विकल्प के रूप में 6 बीज मंत्रों का एक क्रम भी अपनाया जा सकता है। ये बीज मंत्र ऐसी ध्वनियों के समूह हैं, जो परम सत्ता का आह्वान करते हैं। इनका कोई शाब्दिक अर्थ नहीं होता, परन्तु इनका उच्चारण करने से शरीर तथा मन में ऊर्जा के अत्यन्त प्रभावकारी स्पन्दन उत्पन्न होते हैं–

ये बीज मंत्र निम्न हैं–

1. ॐ ह्राम्
2. ॐ ह्रीम्
3. ॐ ह्रूम्
4. ॐ ह्रैम्
5. ॐ ह्रौम्
6. ॐ ह्रः

ये 6 बीज मंत्र सूर्य नमस्कार की एक आवृत्ति में 4 बार क्रम से दुहराये जाते हैं। सूर्य मंत्रों अथवा बीज मंत्रों का सस्वर उच्चारण किया जाये या मानसिक

रूप से, यह अभ्यासी के अपने रुझान तथा अभ्यास की गति पर निर्भर करता है। यदि गति अत्यंत मंद है तो अभ्यास में सूर्य मंत्रों को चक्रों की सजगता के साथ संयुक्त किया जा सकता है, यदि गति कुछ तेज है तो बीज मंत्रों को इसी प्रकार इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि शारीरिक गतिशीलता अधिक है तो चक्रों के प्रति सजग हुए बिना मंत्रोच्चारण किया जा सकता है। इसी स्थिति में बिना मंत्रोच्चारण के भी चक्रों के प्रति सजगता बनाई जा सकती है।

बच्चों के लिये सूर्य नमस्कार

बच्चे अपने आप में पूर्ण होते हैं, परन्तु उनका व्यक्तित्व अनभिव्यक्त रहता है। इन्हें उस बीज की तरह माना जा सकता है, जिसमें सम्पूर्ण क्षमतायें निहित होती हैं, परन्तु वे सुप्तावस्था में रहती हैं। हम अपने चारों तरफ तथा स्वयं अपने अन्दर भी जीवन के अनेक गूढ़ रहस्यों को नित्य देखते हैं, परन्तु उसकी प्रक्रिया से अनभिज्ञ रहते हैं। यदि हमें स्वयं अपनी जीवनीशक्तियों का ज्ञान नहीं होगा तो हम अपने बच्चों को विकसित होने में कैसे मदद कर सकते हैं? एक कुशल माली को पता रहता है कि पौधे को कितनी खाद-पानी चाहिये और कौन-कौन से पौधों की काँट-छाँट करनी है? बच्चों के बगिया, अर्थात् जीवन के लिये, यदि हम कुशल माली सिद्ध नहीं हुए तो हो सकता है कि हम बच्चे रूपी कुछ पौधों के ऐसे आवश्यक हिस्सों अर्थात् शक्ति और क्षमताओं की काँट-छाँट कर डालें जो फिर दुबारा न उगें। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि बच्चों में कुछ इस प्रकार की कमी रह जाये, जो जीवनभर पूरी न हो सके।

शरीर, मन तथा आत्मा के विषय में गुरु ही पूर्ण ज्ञाता होते हैं। उन्हें यह पता रहता है कि विकास के विभिन्न चरणों में बच्चों के लिये किस प्रकार के निर्देशन की आवश्यकता होती है। अध्यात्म के क्षेत्र में सिद्ध पुरुषों ने सामान्यतया 8 वर्ष की वय के बच्चों को सूर्य नमस्कार के साथ-साथ सरल नाड़ी-शोधन प्राणायाम करने तथा गायत्री मंत्र का नियमित जप करने की सलाह दी है। इस प्रकार जीवन के प्रारम्भिक वर्षों से ही व्यक्ति का सन्तुलित एवं सर्वांगीण विकास सुनिश्चित हो जाता है।

कक्षा में सूर्य नमस्कार

आजकल बच्चे भीड़ भरी कक्षाओं में बैठते हैं, पाठ्य-पुस्तकों में ही उलझे रहते हैं तथा अत्यधिक बौद्धिक क्रियाकलाप से उनका मन थक जाता है।

शिक्षा का उद्देश्य किसी प्रकार का काम प्राप्त करने या व्यवसाय करने हेतु आवश्यक बौद्धिक क्षमता प्राप्त करने तक ही सीमित रह गया है। परन्तु शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य मात्र बाह्य सामाजिक तथा आर्थिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति ही नहीं है, बल्कि इसका लक्ष्य व्यक्ति को उसके अन्तर्तम का बोध कराना तथा शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक स्तरों पर उसके व्यक्तित्व को विकसित करना है।

शिक्षा प्रणाली को अधिक उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिये आजकल अनेक शिक्षाविद् उत्सुक दिखाई पड़ रहे हैं, उनका विचार है कि बच्चों के मन तथा व्यक्तित्व के रचनात्मक पक्षों तथा अन्तर्ज्ञान के विकास की ओर ध्यान दिया जाना चाहिये। इससे उस असंतुलन को समाप्त किया जा सकेगा जो भविष्य में अनेक प्रकार की समस्याओं का कारण बन सकता है।

सूर्य नमस्कार, नाड़ी शोधन प्राणायाम तथा गायत्री मंत्र का अभ्यास बाल-व्यक्तित्व के उपर्युक्त दोनों पक्षों का अधिकतम उपयोग करने तथा बुद्धि और अन्तर्प्रज्ञा के स्तरों को विकसित करने हेतु किया जा सकता है।

स्वामी योगभक्ति सरस्वती जो कि सत्यानन्द आश्रम की संस्थापक तथा सी. ई. एस. काण्डोसोट हाई स्कूल में अध्यापिका हैं, ने बच्चों के बौद्धिक क्षमता तथा अन्तर्ज्ञान में संतुलन लाने के उद्देश्य से सूर्य नमस्कार के उपयोग का गहन अध्ययन किया है। उनका विचार है– "माता-पिता, बच्चे तथा अध्यापक, सभी ने हमारे स्कूल में कराये गये योगाभ्यासों (यथा सूर्य नमस्कार) की सफलता को एक स्वर से स्वीकार किया है। अनेक दृढ़ तथा स्थायी प्रभावों को देखकर माता-पिता का विचार है कि अभ्यासों को स्कूल में नित्य कराया जाना चाहिये। इस संबंध में प्रमुख समस्या इस पद्धति में अधिक शिक्षकों को शिक्षित करने की है।"

पूरे विश्व में शिक्षकों ने सूर्य नमस्कार तथा अन्य अभ्यासों को शिक्षण के एक भाग के रूप में अपनाना प्रारम्भ कर दिया है। कक्षा प्रारम्भ होने के पूर्व कुछ ही मिनटों तक किये गये योगाभ्यासों के परिणामस्वरूप बच्चों में सीखने की उत्सुकता बढ़ जाती है। साथ ही उनकी एकाग्रता, ग्रहणशीलता तथा अभिव्यक्तिकरण के गुणों में वृद्धि हो जाती है। सूर्य नमस्कार एक ऐसी पद्धति है, जिसके माध्यम से बच्चों में पाई जाने वाली प्रचुर शारीरिक ऊर्जा का रचनात्मक उपयोग उनके शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने हेतु किया जा सकता है।

भावनाओं का सन्तुलन

बाल-भावनाओं को सन्तुलित करने के दृष्टिकोण से सूर्य नमस्कार द्वारा भावनात्मक स्थायित्व प्राप्त होने की बात बहुत महत्त्वपूर्ण लगती है।

8 वर्ष से ही पीनियल ग्रंथि का क्षय प्रारम्भ हो जाता है। इस कारण 12 से 14 वर्ष की वय में बच्चों में यौवनारम्भ होने लगता है। पीनियल ग्रंथि पिट्यूट्री ग्रंथि से निकलने वाले हार्मोन को, जिससे शरीर में परिपक्वता की स्थिति उत्पन्न होती है, नियंत्रित करती है तथा समय से पूर्व प्राप्त होने वाली युवावस्था को रोकती है। समय से पूर्व इस ग्रंथि का क्षय होने से बहुधा यौन विकास अपेक्षाकृत तेजी से होने लगता है। इसके परिणामस्वरूप नई संवेदनाएँ तथा इच्छाएँ उत्पन्न होती हैं। तब शारीरिक पक्ष मानसिक पक्ष की अपेक्षा प्रबल हो जाता है। इन नई अनुभूतियों की तीव्रता का ठीक से विश्लेषण करके परिपक्व ढंग से इनका सामना कर पाने में किशोर मन असक्षम रहता है। इसके कारण भावनात्मक आघात तथा अपनी पहचान खोने का भय उत्पन्न हो सकता है। यह स्थिति आज के किशोरों में व्यापक रूप से देखी जा सकती है। परिणामस्वरूप हार्मोन सम्बन्धी गम्भीर असंतुलन तथा अनेक प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक व्याधियाँ भी उत्पन्न हो सकती हैं।

योगाभ्यास के माध्यम से पीनियल ग्रंथि के क्षय को रोका जाना सम्भव है। इससे यौन विकास कुछ वर्षों तक के लिये रुक जाता है। जब भावनात्मक और शारीरिक विकास साथ-ही-साथ होता है, तब शारीरिक परिपक्वता अनियंत्रित नहीं हो पाती। इस प्रकार वह भावनात्मक आघातों (जिनका कुप्रभाव भावी जीवन पर पड़ता है) से भी मुक्त रह पाते हैं। पीनियल ग्रंथि के क्षय होने की गति को कम करने हेतु ऋषियों-योगियों ने सूर्य नमस्कार, नाड़ी शोधन प्राणायाम, शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास तथा गायत्री मंत्र के जप का सुझाव दिया है। इन अभ्यासों से सम्पूर्ण आज्ञा चक्र (जिसका स्थान पीनियल ग्रंथि में है) की कार्यशीलता तथा प्रभाव को बनाये रखने में सहायता मिलती है। ऐसा होने पर जीवन की गति निर्बाध हो जाती है। जब बच्चे मानसिक तथा शारीरिक पक्षों में संतुलन स्थापित नहीं कर पाते तो उसका क्या परिणाम होता है? यदि मानसिक ऊर्जा अधिक हो तो बच्चे दिवास्वप्नों में खोये रहते हैं, परन्तु वे अपने को अभिव्यक्त नहीं कर पाते। दूसरी ओर शारीरिक ऊर्जा के कारण वे क्रूर बन जाते हैं तथा उन्हें नियंत्रण में रख पाना असम्भव हो जाता है। इसलिये बच्चों के स्वस्थ विकास हेतु दोनों पक्षों में संतुलन स्थापित होना आवश्यक है।

मानव की एक नई प्रजाति का विकास

सूर्य नमस्कार एक ऐसा अभ्यास है, जिससे 8 वर्ष की आयु से ही व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ना प्रारम्भ हो जाता है। जो बच्चे इस आयु से ही सूर्य नमस्कार का अभ्यास करना प्रारम्भ करते हैं वे आधुनिक प्रचलित बौद्धिक शिक्षा प्राप्त अपने सहपाठियों की तुलना में कहीं अधिक श्रेष्ठ सिद्ध होते हैं।

शरीर क्रिया वैज्ञानिक तथा मानवतावादी एलेक्सिस कैरल द्वारा निरूपित मापदण्ड के अनुसार योग शिक्षा अपने आप में पूर्ण होती है। उनका कहना है, "6 से 18 वर्ष की अवस्था के बालकों, किशोरों और युवकों में शरीर-रचनात्मक आंगिक, ऐन्द्रिक, अस्थि-संबंधी, पेशीय, शारीरिक, बौद्धिक तथा भावनात्मक पक्षों का समन्वित विकास साथ-साथ होना चाहिये। इनमें से कोई भी पक्ष स्वतंत्रत रूप से विकसित नहीं होना चाहिये। इन पक्षों में सबसे महत्त्वपूर्ण है – शारीरिक तथा भावनात्मक पक्ष तथा शिक्षा का प्रारम्भ इन्हीं पक्षों से होना चाहिये। सबसे पहले मनोकायिक अनुशासन का प्रारम्भ होना चाहिये। साथ-ही-साथ मानव के आपसी संबंधों को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों को भी समन्वित करना चाहिये।"

उपर्युक्त कथन में युवा वर्ग के बीच आधारभूत यौगिक (जिसमें सूर्य नमस्कार सम्मिलित है) को प्रारम्भ करने की आवश्यकता स्पष्ट होती है। इससे मानव व्यक्तित्व में मानसिक तथा शारीरिक गतिविधियों का नियंत्रित तथा संघटित ढंग से प्रकटीकरण होगा और तब मानव की एक नई प्रजाति का विकास होगा। महान् मानवतावादी तथा चिकित्सक एल्बर्ट श्वीट्ज़र के शब्दों में –

"एक नवीन पुनर्जागरण काल का प्रारम्भ होना चाहिये। मध्य युग के बाद के पुनर्जागरण काल की अपेक्षा इसमें गहराई हो। इसमें नैतिक मूल्यों को ही चरम सत्य तथा अधिक महत्त्वपूर्ण माना जायेगा। परिणामस्वरूप मानव जीवन वर्तमान अर्थहीन धारणाओं से मुक्त हो सकेगा।"

प्राण शक्ति प्रदाता – सूर्य नमस्कार

सूर्य नमस्कार सौर-मानस दर्शन की एक विधि है, जिसके अभ्यास से हम पूर्ण समग्रता से उल्लासपूर्ण जीवन जी सकते हैं और अपने क्रियाकलापों को अपेक्षाकृत अधिक निपुणता के साथ सम्पन्न कर सकते हैं। ऐसा लगता है कि इस अभ्यास का विकास दो मुख्य उद्‌देश्यों से किया गया था – पहला, आत्मज्ञान से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए उत्तम शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त करना तथा दूसरा, आध्यात्मिक जागृति तथा कुण्डलिनी योग के लिये स्वयं को तैयार करना।

सूर्य नमस्कार के नियमित अभ्यास से होने वाले लाभ सामान्य शारीरिक व्यायामों की तुलना में बहुत अधिक हैं। साथ-ही-साथ इससे खेल से मिलने वाले आनन्द तथा शारीरिक मनोरंजन की मात्रा में भी वृद्धि होती है। इसका कारण है कि इससे शरीर की ऊर्जा पर सीधा शक्तिप्रदायक प्रभाव पड़ता है। यह सौर ऊर्जा मणिपुर चक्र में केन्द्रित रहती है तथा पिंगला नाड़ी से प्रवाहित होती है। जब यौगिक साधना के साथ सम्मिलित करते हुए अथवा प्राणायाम के साथ सूर्य नमस्कार का अभ्यास किया जाता है, तब शारीरिक तथा मानसिक दोनों स्तरों पर ऊर्जा संतुलित होती है। इस तथ्य को ठीक से समझने के लिये हमें नाड़ियों के सूक्ष्म क्रियाकलापों का ज्ञान होना चाहिये, जिससे शरीर प्रभावित होता है।

जीवन का दोहरा पक्ष

हम द्वयात्मक जगत् में रहते हैं, जैसे – रात-दिन, अंधेरा-उजाला, अच्छा-बुरा, अन्तर्मुखी-बहिर्मुखी, ज्ञान-क्रिया, इत्यादि। हम दो ध्रुवों की दुनिया में जी रहे हैं। इन्हें योग में इड़ा तथा पिंगला के नाम से जाना जाता है। ताओ

दर्शन में यिन तथा याङ् इस द्वित्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। अपने ब्रह्माण्ड को इन प्रतीकों से समझा जा सकता है।

योगशास्त्रों के अनुसार एक आधारभूत ऊर्जा-संरचना हमारे शरीर को जीवन प्रदान करती है। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार पूरे मानव शरीर में 72000 नाड़ियाँ या ऊर्जा-प्रवाह पथ हैं। विभिन्न स्तरों पर ये प्रवाह परस्पर संबद्ध हैं तथा एक-दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। ये स्तर शारीरिक (स्नायु, रक्त परिसंचरण तथा लसीका संबंधी), प्राणिक (शरीर से संबंधित ऊर्जा के अपेक्षाकृत अधिक सूक्ष्म प्रवाह, यथा– चयापचय) , मानसिक (विचारों की धारा) या अतीन्द्रिय स्वप्न या बिम्ब हो सकते हैं। ऊर्जा-प्रवाह के इन दोनों पथों की विशेषतायें निम्नांकित हैं–

इड़ा	**पिंगला**
बायीं नासिका से श्वास प्रवाह	दायीं नासिका से श्वास प्रवाह
अन्तर्मुखता	बहिर्मुखता
सजगता	शक्ति तथा क्रियाशीलता
मन	प्राण
नकारात्मक	सकारात्मक
ठण्ढ	गर्मी
स्त्री	पुरुष
निष्क्रिय	क्रियाशील
चंद्रमा	सूर्य
आत्म चेतना	बाह्य चेतना
अन्तर्ज्ञान	तर्कशीलता
शरीर का बायाँ भाग	शरीर का दायाँ भाग
मस्तिष्क का दायाँ भाग	मस्तिष्क का बायाँ भाग

इड़ा और पिंगला की अन्य बहुत-सी विशेषतायें हो सकती हैं। समूची प्रकृति में यह द्वित्व दृष्टिगोचर हो रहा है। व्यष्टि और समष्टि – दोनों इन द्वित्व पर आधारित हैं, यथा– स्नायु आवेगों को संचालित करने के लिए धमनी/शिरा, अनुकम्पी/परानुकम्पी स्नायु, सोडियम/पोटेशियम आदि।

आध्यात्मिक शक्ति का जागरण

जब इड़ा और पिंगला का संयोग होता है, तो एक तीसरी शक्ति का उदय होता है। यह शक्ति है – आध्यात्मिक ऊर्जा जिसका प्रवाह सुषुम्ना में होता है। इड़ा तथा पिंगला में पूर्णतया संतुलन होने पर ही यह जागरण सम्भव है। सुषुम्ना का यह जागरण तथा मेरुदण्ड में ऊर्जा का जागरण सह संबंधित है। इसी प्रकार निर्मुक्त होने वाली ऊर्जा के द्वारा व्यक्तिगत जागरूकता, देश-काल से परे लोकोत्तर आध्यात्मिक क्षेत्र में पहुँच जाती है, परन्तु इस जागरण के पूर्व लम्बे समय के अभ्यास के द्वारा मन तथा शरीर की पूरी तैयारी होना आवश्यक है। यह भी आवश्यक है कि प्रवाह समान रूप से तथा पर्याप्त मात्रा में होता रहे।

पिंगला नाड़ी को संतुलित तथा प्राण ऊर्जा को निर्मुक्त करने में सूर्य नमस्कार की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। स्वस्थ शरीर तथा क्रियाशील जीवन ही आध्यात्मिक विकास का आधार है। अतीत के अनेक दर्शनों ने इस आधारभूत तथ्य की उपेक्षा की है। जब तक शारीरिक अवयव संतुलित न हों तथा मानव के समग्र व्यक्तित्व के साथ ये संघटित न हो, तब तक आध्यात्मिक जागरण सम्भव नहीं है। क्रमविकास, विशेषत: आध्यात्मिक स्तर के क्रमविकास के लिए संतुलन की आवश्यकता होती है, अन्यथा अंधकार तथा अज्ञान बने ही रहेंगे।

प्राणमय शरीर तथा नाड़ियों पर प्रभाव

यह समझने के लिये कि सूर्य नमस्कार का प्राणमय शरीर तथा नाड़ियों पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है, हमें यह जानना चाहिये कि प्रत्येक आसन का अलग-अलग क्या प्रभाव होता है। तभी हम सम्पूर्ण अभ्यास को समझ सकते हैं। यहाँ हम आसन के साथ-साथ संबंधित प्राणायाम, चक्रों के प्रति जागरूकता तथा मंत्रों के प्रभावों पर भी विचार कर रहे हैं। आसनों के साथ इन्हें जोड़ देने से पूरे अभ्यास का प्रभाव हजार गुना बढ़ जाता है।

1. प्रणामासन – अन्तर्मुखता, शिथिलीकरण तथा शान्ति की स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। अनाहत चक्र की क्रियाशीलता बढ़ती है।

2. हस्तउत्तानासन – इसमें शरीर ऊपर की ओर ताना जाता है। पीठ तथा गर्दन की पेशियाँ शिथिल होती हैं और वक्ष तथा उदर में तनाव आता है। इस आसन में गहरी श्वास अन्दर लेते समय उदर की मालिश होती है तथा

पाचन सुधरता है। शरीर को ऊपर की ओर खींचने से मेरुदण्ड में भी इसी प्रकार का खिंचाव उत्पन्न होता है, जिससे कशेरुकाओं के बीच पाई जाने वाली स्पंजी डिस्क स्वस्थ बनी रहती है तथा मेरुदण्ड के स्नायुओं को शक्ति मिलती है। भुजायें तथा कंधे तनाव-रहित हो जाते हैं। गोल कंधों की स्थिति सुधर जाती है। इस आसन से मोटापा भी घटता है, क्योंकि यह चुल्लिका ग्रंथि तथा विशुद्धि चक्र पर प्रभाव डालता है और चयापचय की गति में वृद्धि करता है। पूरक के वेग से प्राण का प्रवाह शरीर के ऊपरी भाग की ओर होता है।

3. पादहस्तासन– इस आसन में आगे की ओर झुकने वाले तथा सिर के बल किये जाने वाले आसनों का संयुक्त प्रभाव पड़ता है। इसमें उदर के अवयवों विशेषतया यकृत, गुर्दे, पित्ताशय, अग्न्याशय, अधिवृक्क (ऐड्रिनल) ग्रंथि, गर्भाशय तथा अण्डाशय की मालिश हो जाती है। सम्पूर्ण उदर प्रदेश को शक्ति प्राप्त होती है, जिससे कब्ज की तरह अनेक बीमारियों से मुक्ति मिलती है। पाचन शक्ति बढ़ती है तथा महिलाओं के रोग, जैसे, गर्भाशय का अपनी जगह से हट जाना या अनियमित मासिक धर्म दूर होते हैं। मेरुदण्ड के स्नायुओं में खिंचाव उत्पन्न होने के कारण उनमें रक्त संचार बढ़ता है। घुटने के पीछे की नसों तथा पिण्डलियों में भी खिंचाव आता है, जिससे स्फीत शिरा तनावमुक्त होती हैं तथा हृदय में रक्त वापस आने में सहायता मिलती है। अंतिम स्थिति में मस्तिष्क में रक्त प्रवाह बढ़ता है। आगे झुकने वाले तथा सिर के बल किये जाने वाले आसनों का संयुक्त प्रभाव पड़ने के कारण सम्पूर्ण शरीर को शक्ति प्राप्त होती है, क्योंकि सभी महत्त्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रंथियों यथा–प्रजनन अंग, अधिवृक्क, थाइमस, चुल्लिका, उपचुल्लिका, पीनियल तथा पीयूषिका पर दबाव पड़ता है। सबसे अधिक खिंचाव बस्ति प्रदेश में होता है। स्वाधिष्ठान चक्र भी बहुत अधिक प्रभावित होता है। प्राण रेचक द्वारा शरीर के निचले भागों में प्रवाहित किया जाता है। जब प्राण नीचे की ओर बढ़ता है तो उसे अपान कहते हैं।

4. अश्व संचालनासन– इस आसन में मेरुदण्ड पीछे की ओर मुड़ता है। इससे पीठ की पेशियाँ शिथिल होती हैं। परिणामस्वरूप उदर की पेशियों में भी खिंचाव आता है। प्रमुख खिंचाव श्रोणि प्रदेश में ही होता है। जब एक पैर आगे रखते हुए दूसरे को यथासम्भव पीछे की ओर ले जाया जाता है तो श्रोणि नीचे तथा आगे की ओर आती है। एकाग्रता भ्रूमध्य, अर्थात् आज्ञा चक्र पर होनी चाहिये, जिसका सीधा संबंध मूलाधार चक्र से है। इस प्रकार

श्रोणि प्रदेश में निर्मुक्त हुई ऊर्जा से आज्ञा चक्र उद्दीप्त होता है। पूरक के साथ प्राण एक नाड़ी के सहारे ऊपर की ओर बढ़ता है। यह नाड़ी जाँघ के अग्र भाग तथा शरीर के अग्र भाग (ऊपर की ओर) से होती हुई आज्ञा चक्र तक पहुँचती है। यदि आपकी साइनस अवरुद्ध है तो इस आसन का अभ्यास करते समय तुरन्त आराम का अनुभव होता है, क्योंकि इससे दोनों भागों में खिंचाव होता है।

5. पर्वतासन – इसे सुमेरु आसन भी कहते हैं। इससे भुजाओं तथा पैरों की पेशियाँ तथा स्नायु सबल बनते हैं; पिंडली की पेशियों तथा अचिलिस तंतु में खिंचाव उत्पन्न होता है तथा मेरुदण्ड सीधा दृढ़ बनता है। इस आसन से स्फीत शिरा को आराम मिलता है तथा मेरुदण्ड के स्नायु सबल बनते हैं। ऐसा कहा जाता है कि इससे विशुद्धि चक्र में उद्दीपन होता है, क्योंकि ठुड्ढी को सीने से सटाया जाता है जिससे चुल्लिका ग्रंथि पर दबाव पड़ता है। रेचक के साथ-साथ प्राण का प्रवाह नीचे की ओर हो जाता है।

6. अष्टांग नमस्कार – इस आसन से वक्ष का विकास होता है। बाहु, कंधे तथा पैर सबल बनते हैं। सामान्य मेरुदण्ड की वक्रता पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। इस कारण इस क्षेत्र में रक्त प्रवाह बढ़ जाता है और तब स्नायु सबल होते हैं। इस स्थिति में पीठ की पेशियाँ बहुत अधिक शिथिल हो जाती हैं। मणिपुर चक्र में उद्दीपन होता है। इस स्थिति में जब मेरुदण्ड पर ऊपर से नीचे तक दबाव पड़ता है, तब इस केन्द्र से निर्मुक्त ऊर्जा की बढ़ी हुई मात्रा का अनुभव किया जा सकता है। चूँकि श्वास को बाहर ही रोककर रखा जाता है (बहिर्कुम्भक) अत: प्राण मणिपुर चक्र की ओर बढ़ता है, जहाँ पर प्राण तथा अपान का संयोग होता है।

7. भुजंगासन – इस आसन में वक्ष तथा उदर पर गतिशील दबाव पड़ता है, जिसके कारण दमा, कब्ज, अपच, गुर्दे तथा यकृत की अनेक बीमारियों से मुक्ति मिलती है। पृष्ठ पेशियों यथा मेरुदण्ड के स्नायुओं को तनावरहित बनाने के लिये यह एक सर्वश्रेष्ठ आसन है। जब अभ्यासी इस आसन की स्थिति में आता है, तब ऊपर से नीचे तक प्रत्येक कशेरुका पर खिंचाव पड़ता है। इस स्थिति में मेरुदण्ड सिर की ओर आगे खिंच जाता है। इस कारण मेरुदण्ड के अंतिम छोर पर भी (जहाँ स्वाधिष्ठान चक्र है) सूक्ष्म खिंचाव उत्पन्न होता है। पूरक के कारण इस स्थिति में प्राण का प्रवाह ऊपर की ओर होता है, परन्तु हम अपनी सजगता स्वाधिष्ठान क्षेत्र में बनाये रखते हैं, ताकि

ऊर्ध्वगामी प्रवाह के स्रोत पर प्राण को उद्दीप्त कर सकें। प्राण भी सहज ही ऊपर की ओर बढ़ता है, क्योंकि पिछली दो स्थितियों में इसे नीचे की ओर रोक कर रखा गया था।

संयुक्त प्रभाव

स्थूल शरीर, पदार्थ तथा ऊर्जा का संयोग है। वास्तविक सूर्य नमस्कार में आगे तथा पीछे की ओर होने वाली शारीरिक गतिविधियाँ हमारे चयापचय की दर को बढ़ाने तथा ऊर्जा को निर्मुक्त करने के लिये पर्याप्त है। जब इन्हें चक्रों के उद्दीपन के साथ सम्बद्ध कर दिया जाता है, तो इसका प्रभाव बढ़ जाता है।

मेरुदण्ड, जोकि शरीर तथा मस्तिष्क के मध्य एक कड़ी है, हमारी सभी प्रकार की ऊर्जा का प्रवाह-पथ है। इड़ा तथा पिंगला नाड़ियाँ इसमें स्थित हैं। अत: इसे स्वस्थ रखना अत्यंत आवश्यक है। एक क्रियाशील तथा गतिशील अभ्यास के रूप में सूर्य नमस्कार पिंगला नाड़ी पर सबसे अधिक प्रभाव डालता है, विशेषत: जब इसे शीघ्रता से किया जाता है। परन्तु यदि मंत्रों एवं चक्रों के प्रति जागरूकता रखते हुए मंद गति से इसका अभ्यास किया जाये तो इड़ा तथा पिंगला दोनों लगभग समान रूप से प्रभावित तो होती हैं, परन्तु यह बहुत कुछ अभ्यासी की योग्यता पर निर्भर करता है।

जब हम सूर्य नमस्कार का अभ्यास मंद गति से करते हैं तब अपेक्षाकृत पिंगला नाड़ी को कम महत्त्व दिया जाता है तथा मानसिक विकास पर अधिक समय दिया जाता है। इस अभ्यास से आसनों की यह श्रृंखला मुद्राओं की श्रृंखला का रूप ले लेती है और तब इससे अधिक संतुलित विकास होता है। यही कारण है कि हम तीव्र तथा मंद दोनो गतियों से इसका अभ्यास करने की सलाह देते हैं, क्योंकि वर्तमान जीवनशैली के कारण हममें से अधिकतर लोगों के लिये पिंगला नाड़ी में कुछ अधिक उद्दीपन तथा परिष्किरण की आवश्यकता होती है। मुद्राओं अथवा ध्यान के माध्यम से आत्मा की गहराईयों में उतरने के पूर्व शरीर को सबल तथा स्वस्थ बनाना आवश्यक होता है। शरीर से अशुद्धियों को बाहर निकालने वाले मार्ग बिल्कुल अवरोधरहित होने चाहिये।

प्राण की गति को बढ़ाकर तथा उसे नियंत्रित करके शरीर में प्राण-प्रवाह के मार्गों को स्वच्छ बनाना सम्भव है। सूर्य नमस्कार के प्रत्येक आसन से प्राणों के ऊपर तथा नीचे की ओर होने वाले स्वाभाविक प्रवाह में सहायता मिलती है,

जिससे अवरोध समाप्त हो जाते हैं। अभ्यास की समाप्ति पर प्राणों का प्रभाव सहज हो जाता है तथा शारीरिक क्रियाकलापों में सुधार होता है। यह ऊर्जा का अपव्यय होने देने के स्थान पर उसे रचनात्मक दिशा प्रदान करता है।

मणिपुर चक्र के उद्दीपन के कारण इस रचनात्मक दिशा (अवरोध समाप्त होने के फलस्वरूप पुनर्दिशान्तरण कहना उचित होगा) का प्रभाव बढ़ जाता है। यद्यपि हम एक आवृत्ति में मणिपुर चक्र पर दो बार से अधिक एकाग्र नहीं हो पाते, फिर भी इस पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। साथ-ही-साथ इससे पिंगला नाड़ी के प्रवाह में भी वृद्धि होती है।

मणिपुर चक्र नाभि में स्थित है जिसे शरीर का गुरुत्व केन्द्र कहा जा सकता है। यह सौर-जालक से जुड़ा हुआ है, जो ऐसे स्नायुओं का समूह है जो केन्द्र जालक से सूर्य की रश्मियों की भाँति बाहर की ओर फैल जाते हैं। सौर-जालक अनुकंपी स्नायु मंडल तथा पिंगला नाड़ी से संचालित होता है, जो पाचन व पोषण तत्त्वों के स्वांगीकरण के लिये उत्तरदायी है। 'व्यष्टि' के स्तर पर सूर्य के माध्यम से वृक्षों में वृद्धि होती है तथा आहार निर्माण होता है। यह हमारे शारीरिक स्वास्थ्य हेतु अत्यंत आवश्यक है। सूर्य नमस्कार से शरीर में लोच आती है तथा उस पर तनाव पड़ता है। गुरुत्व-केन्द्र पर खिंचाव तथा संकुचन होने के कारण उसमें अधिकतम उद्दीपन होता है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास पाचन शक्ति में सुधार लाने के अतिरिक्त मणिपुर चक्र को स्वस्थ रखते हुए सम्पूर्ण शरीर में जीवनीशक्ति की वृद्धि करता है।

एक बार सूर्य नमस्कार का प्रारम्भिक प्रशिक्षण पाने तथा उससे परिचित होने के पश्चात् धीरे-धीरे आगे बढ़ना चाहिये। पहले हम शारीरिक ढाँचे, पेशियों, नसों में खिंचाव उत्पन्न करते हैं तथा आंतरिक अवयवों को उद्दीप्त करते हैं। एक बार अपनी शारीरिक सीमाओं का ज्ञान हो जाने पर तथा उनसे मुक्ति पाने का प्रयास प्रारम्भ हो जाने के बाद, प्राणों की सजगता की ओर कदम बढ़ाये जा सकते हैं तथा इस स्तर पर विभिन्न अवरोधों को दूर करने का प्रयास किया जा सकता है। अन्ततः इससे प्राणों के प्रवाह पर इच्छित नियंत्रण प्राप्त करना सम्भव हो जाता है। इसके पश्चात् हम अगली स्थितियों के लिये तैयार हो जाते हैं, जोकि सूक्ष्म अतीन्द्रिय तथा मानसिक स्तरों पर प्राणों के प्रसार से संबंधित है।

मनोगति विज्ञान

यौगिक शरीर विज्ञान के अनुसार शरीर शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, सहज अनुभूति तथा आध्यात्मिक तत्त्वों का समूह है। जो पक्ष जितने ही सूक्ष्म हैं, वे उतने ही शक्तिशाली भी हैं। मन के द्वारा शरीर का संचालन होता है। उदाहरणार्थ – यदि हम मन की ऐसी स्थिति बना सकें, जिसमें रचनात्मक तथा जीवन्त बिम्बों का मानस दर्शन सम्भव हो सके, तो इससे नकारात्मक स्थितियों जैसे – अवसाद, चिन्ता अथवा आलस्य से मुक्ति पाना सम्भव हो सकेगा। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि मन तथा शरीर अभिन्न हैं। अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं। परन्तु मन की शक्ति अनन्त है।

योगाभ्यास का उद्देश्य है – शरीर तथा मन में लचीलेपन का विकास। ध्यान के अभ्यासों यथा – अन्तर्मौन द्वारा हम इतने सक्षम हो जाते हैं कि मानसिक संतुलन बिगाड़ने वाले अवांछित विचारों तथा भावनाओं से समय रहते ही मुक्ति पा लेते हैं। इस स्थिति तक पहुँचने के लिये अभ्यास, अनुभव तथा उचित निर्देशन की आवश्यकता है। जब तक हम इस योग्य नहीं हो जाते कि मन पर नियंत्रण रख सकें और मन के अन्दर मनचाही चीजें ही रहने दे सकें, तब तक हमें ऐसी विधियों की सहायता लेनी पड़ेगी जो मन में एक रचनात्मक स्थिति उत्पन्न कर सके।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, सूर्य नमस्कार द्वारा इड़ा तथा पिंगला नाड़ियाँ समान रूप से प्रभावित होती हैं। जब हम मंद गति से तथा मंत्रोच्चारण या चक्रों की सजगता के साथ अभ्यास करते हैं, तब यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। सूर्य नमस्कार के अभ्यास से होने वाले लाभ का एक अन्य पक्ष यह भी है कि इससे सकारात्मक तथा शक्तिशाली मन को विकसित करने में सहायता मिलती है।

प्रत्येक आसन मन की गहराई में स्थित आदिरूपों के सामने एक बिम्ब प्रस्तुत करता है। उदाहरणस्वरूप साँप के बिम्ब (भुजंगासन) का (पिंगला नाड़ी की तरह का) अत्यंत शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है। पर्वतासन, अश्व संचालनासन तथा हस्तउत्तानासन से बनने वाले बिम्ब भी बहुत प्रभावकारी होते हैं। सूर्य नमस्कार का यह भी एक सुरुचिपूर्ण तथा सुन्दर पक्ष है कि इसमें प्रणामासन जैसी शान्त तथा परमपावन स्थिति के साथ-साथ प्रभावकारी बिम्ब भी सम्मिलित हैं।

ध्यान-प्रार्थना के अभ्यास की भाँति सूर्य नमस्कार के सभी आसनों का मानस दर्शन करें तथा इनसे होने वाले आन्तरिक प्रभावों का अनुभव करें। अब हम सूर्य नमस्कार के मनोगति-वैज्ञानिक प्रभावों का वर्णन करेंगे। इसका उद्‌देश्य सूर्य नमस्कार के अभ्यास पर और अधिक गहराई से विचार करना है तथा प्रत्येक अभ्यासी को इस बात के लिये प्रोत्साहित करना है कि वह अपने मन की गहराई में झाँके और अनुभवों का अपने ढंग से विश्लेषण करें।

मनोगति की वैज्ञानिक व्याख्या

सूर्य नमस्कार के अभ्यास में प्रणामासन प्रथम तथा अन्तिम स्थिति है। यह उषाकाल से लेकर सूर्यास्त तक सूर्य के परिक्रमा पथ की प्रारम्भिक तथा अन्तिम स्थिति की द्योतक है। इस प्रकार इससे शान्ति तथा (सूर्योदय-सूर्यास्त के) सौन्दर्य का बोध होता है। इसमें आध्यात्मिक महत्त्व के दो कालों (उषा तथा संध्या काल) की शान्त छवि निहित है। जब अन्धकार तथा प्रकाश मिलते हैं, इड़ा तथा पिंगला का संयोग होता है, तब एक नयी आध्यात्मिक आलोकमयी शक्ति सुषुम्ना जाग्रत होती है। प्रणामासन का अभ्यास मानो इस बात का प्रतीक है कि अपनी व्यस्त दिनचर्या का प्रारम्भ करने से पूर्व हम अपने आंतरिक संतुलन का आकलन कर रहे हैं। सूर्य नमस्कार के अगले कठिन और गतिशील आसन हमारे दैनिक व्यस्तता के प्रतीक हैं। अभ्यास के अन्त में किया जाने वाला प्राणायाम मानो दैनिक क्रियाकलापों की समाप्ति पर पुनः तनावमुक्त और शान्त होने की आवश्यकता को पूरी करता है। इस प्रकार उस समय से जब सांसारिक क्रियाकलापों के क्षेत्र में प्रवेश करने के पूर्व सारे आवश्यक संसाधन एकत्र कर लेने के लिए आवश्यक शांति पाने की आवश्यकता होती है और उस

समय तक जब हम दिनभर की व्यस्तता के बाद क्लान्त होकर पुन: विश्रांति प्राप्त करना चाहते हैं, प्रणामासन उपयुक्त मानसिक स्थिति को तैयार करता है। चूँकि आसन के समय श्वास बाहर छोड़ी जाती है (रेचक), अत: यह अन्तर्मुखता का संकेत है।

प्रणामासन के पश्चात् हस्तउत्तानासन की स्थिति आती है, जिसमें अपने हाथ तथा सिर को अधिक-से-अधिक ऊपर की ओर ले जाते हुए खींचा जाता है। इसके पश्चात् हाथ तथा सिर धीरे-धीरे नीचे की ओर झुकते हैं तथा इस प्रकार अभ्यास के मध्य में शरीर का झुकाव अधिक-से-अधिक नीचे होता है, जबकि इस समय सूर्य की स्थिति उच्चतम होती है। हस्तउत्तानासन मानो श्वास के माध्यम से ही नहीं, वरन् शरीर के प्रत्येक रोम से बाल सूर्य से ऊर्जा ग्रहण करने का प्रतीक है। यह वह ऊर्जा है, जिसकी शक्ति से मनुष्य अपने व्यस्त दैनिक जीवन के कार्यकलाप निपटाता है।

पादहस्तासन तथा पर्वतासन जैसे आसन अन्तर्मुखता का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह भी कह सकते हैं कि प्रत्याहार की अपेक्षा ये रोजाना के काम-काज पूरा करने के लिए आवश्यक आत्मनिरीक्षण के अधिक निकट है। इन आसनों के कारण दैनिक क्रियाकलापों से जीवन में आने वाली बहिर्मुखता संतुलित होती है। अश्व संचालनासन से पूर्व पादहस्तासन की स्थिति का एक विशेष महत्त्व है। दैनिक जीवन की अनेक समस्याओं का समाधान प्राप्त करने हेतु पादहस्तासन मानो अपने अन्दर की क्रिया का प्रतीक है। प्रेरणा हेतु ऊपर की ओर देखने के पश्चात् (हस्तउत्तानासन) संतुलन तथा स्थायित्व के लिए पादहस्तासन में मानव मानो पृथ्वी की ओर देखता है।

अश्व संचालनासन उस शक्ति तथा साहस का प्रतीक है जो जीवन की समस्याओं का सामना करने के लिए आवश्यक है। यह उस आत्मविश्वास का भी प्रतीक है, जो अपनी सत्ता की गहराइयों में झाँकने के लिए अपने आंतरिक मार्ग निर्देशक (आज्ञा) के सम्पर्क में आने के बाद प्राप्त होता है।

अष्टांग नमस्कार मानव ऊर्जा के निम्नतम तल का प्रतीक है। जब सूर्य मध्याह्न अथवा मध्य रात्रि में अपनी पराकाष्ठा पर होता है, तब इस समय मनुष्य अत्यन्त नाजुक परिस्थितियों से गुजर रहा होता है। इस समय लोग विश्राम करना या सोना चाहते हैं तथा तमस् की जड़ता के वश में होते हैं। इस प्रकार यह आसन मध्याह्न सूर्य के प्रभाव के समक्ष पूर्ण आत्मसमर्पण का भाव प्रकट करता है।

भुजंगासन निद्रा से जागने की स्थिति, अज्ञान से ज्ञान के उदय तथा तमोगुण की जड़ता से राजसिक जीवनीशक्ति के जागरण का प्रतीक है। सूर्य ज्ञान के जागरण का प्रतीक है। भुजंगासन में भुजंग की भाँति सिर को पीछे की ओर ले जाने का अर्थ है कि मानव वापस आध्यात्मिक संतुलन व सात्त्विक स्थिति की ओर आरोहण कर रहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं, आकाशगामी सूर्य की गति के साथ-साथ सूर्य नमस्कार के आसन मानव की जीवनीशक्ति और पिंगला नाड़ी की स्थिति के प्रतीक हैं। ऊषाकाल में यह शक्ति और पिंगला नाड़ी प्रबल, मध्याह्न में निम्नतम व सूर्यास्त के समय पुनः प्रबल रहती है।

उपरोक्त व्याख्या अन्तिम व्याख्या नहीं है। इन प्रतीकों के प्रति सजगता के द्वारा सूर्य नमस्कार के अभ्यास की गहराईयों में झाँकने का अवसर मिलता है और तब यह अभ्यास मात्र शारीरिक स्तर का अभ्यास बन कर नहीं रह जाता। इन प्रतीकों तथा उन पर किये गये चिंतन-मनन का यह परिणाम होता है कि मानसिक सजगता नकारात्मक विचारों से सकारात्मक विचारों की ओर उन्मुख हो जाती है। पिंगला नाड़ी में उद्दीपन के परिणामस्वरूप प्राप्त सुन्दर स्वास्थ्य तथा यह रूपांतरित मानसिक सजगता सूर्य नमस्कार के प्रभावों को प्रबल करते हैं।

इस प्रकार हम सूर्य नमस्कार को मन के रूपान्तरण का एक सशक्त माध्यम मान सकते हैं। यह बात तब और भी अधिक स्पष्ट होती है, जब अभ्यास करते समय हम इन प्रतीकों के प्रति अपनी सजगता बनाये रखते हैं और इन सबका परिणाम होता है – सुन्दर स्वास्थ्य और ओजपूर्ण जीवनीशक्ति।

जैव लय

एक स्वस्थ शरीर के अवयव भली प्रकार से उस समस्वरित वाद्य यंत्र की तरह होते हैं जो मस्तिष्क तथा स्नायु-संस्थान द्वारा संचालित होते हैं। शरीर का प्रत्येक अवयव दूसरे अवयवों के साथ लयबद्ध ढंग से सामंजस्य की स्थिति में (जिस समय उनके क्रियाशील होने की आवश्यकता होती है) कार्य करता है। परन्तु एक अस्वस्थ शरीर में इस प्रकार के सामंजस्य का अभाव रहता है। वह एक बेसुरे वाद्य यंत्र की तरह हो जाता है। ऐसी स्थिति तब आती है, जब शरीर में ऊर्जा के लिये उत्तरदायी संस्थान की क्रियाशीलता में या तो ऊर्जा कम हो जाती है अथवा बढ़ जाती है या नियंत्रण करने वाले तंत्रिका परिपथ से शरीर को उचित निर्देशन नहीं मिल पाता।

शरीर के दैनिक जैव लय हमारे वातावरण तथा जीवनशैली द्वारा निर्धारित होते हैं। आन्तरिक जैव लय को न केवल हमारी आन्तरिक आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिये, बल्कि उन्हें बाह्य माँगों तथा शक्तियों के साथ सामंजस्य भी स्थापित करना चाहिये। बहुत से आन्तरिक जैव लय रात-अंधकार और दिन-प्रकाश के क्रम तथा हमारे द्वारा प्रतिदिन किये जाने वाले कार्यों के क्रम तथा अपनी धुरी पर घूमते हुए सूर्य की परिक्रमा करती हुई पृथ्वी की गति द्वारा निर्धारित होते हैं।

योगासनों पर शोध-कार्य करने वाली एकेडमी ऑफ फिजिकल एजूकेशन, वॉरसॉ के शरीर विज्ञान विभाग के प्रोफेसर वीजलॉ रोमानोस्की का विचार है – "गति तथा लय हमारे ब्रह्माण्ड की एक विशेषता है। जीवों में लयों का परिवर्तन बाहरी वातावरण में घटित होने वाली प्रक्रियाओं के आवर्तन पर निर्भर होते हैं। इन्हें बाह्य लय कहते हैं। इसका कारण होता है, बाह्य वातावरण में घटित होने वाली घटनाओं की पुनरावृत्ति का समय (आवर्तन), जिन्हें हम

बाह्य सामंजस्य कहते हैं। परन्तु इसके अतिरिक्त भी शारीरिक अवयवों में विशेष लय विद्यमान रहते हैं। इन्हें आन्तरिक लय कहा जाता है।

जैव लय के सिद्धान्त के अनुसार आन्तरिक तथा बाह्य अनुक्रम को आवृत्तियों के आधार पर निम्नांकित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

1. निम्न आवृत्ति – जैसे ऋतुएँ तथा मासिक चक्र।
2. सामान्य आवृत्ति – जैसे श्वसन तथा हृदय चक्र।
3. उच्च आवृत्ति – जैसे एन्जाइम संबंधी प्रणालियों में स्पन्दन या स्फटिक के परमाणु।

सूर्य नमस्कार का अध्ययन करते समय हम साधारण लय पर ही अधिक ध्यान देंगे, क्योंकि इन्हें स्पष्ट देखा जा सकता है। हमारे आस-पास उच्च तथा निम्न आवृत्तियों को समझने के लिये साधारण लयों से हमें बड़ी मदद मिलेगी। मध्य आवृत्ति में दिन व रात्रि, हृदय तथा उदर संबंधी लय सम्मिलित हैं।

आधुनिक जीवन-पद्धति के कारण प्रकृति के हितकर तथा लयबद्ध प्रभावों से मानव का संबंध टूट गया है। आन्तरिक लयों (जैसे, स्नायु संस्थान तथा अन्त:स्रावी संस्थान जो अत्यन्त नियमितता से क्रियाशील रहते हैं) में मानसिक तनाव के कारण असंतुलन आ गया है। परिणामस्वरूप बेचैनी, विक्षिप्तिता और अनेक रोगों का जन्म हुआ। अधिकांश सामान्य व्यक्तियों की मस्तिष्क-तरंगों के अध्ययन से पता चलता है कि उनके मस्तिष्क के विभिन्न भागों के बीच सामंजस्य का अभाव रहता है। डॉक्टरी परीक्षण के समय भी यह पाया गया कि जब शरीर का एक अवयव, एक तरफ तो तनावमुक्त हो रहा होता है, तब उसी समय दूसरा अवयव शरीर में तनाव की स्थिति का सामना करने के लिये तैयार हो रहा होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि विभिन्न शारीरिक अंगों में सामंजस्य का अभाव है। वे स्वतंत्र रूप से कार्य करने लगते हैं। इसके कारण विचारों में असंतुलन, हल्का अवसाद, एकाग्रता का अभाव तथा भावनात्मक एवं मानसिक अस्थिरता जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

सामान्य आन्तरिक लयबद्ध कार्यकलापों की स्थिति लाने हेतु हमें वर्षों से अव्यवस्थित प्रतिरूपों को एक करना होगा। इसके लिये ऐसी विधियों को अपनाने की आवश्यकता होती है जिनसे स्नायु संस्थान के *स्ट्रोमा* तथा इसके संवेदी, प्रेरक तथा स्वसंचालित अवयव पर प्रभाव डाल सकें। यह स्नायु संस्थान का *स्ट्रोमा* ही है, जिसके माध्यम से तरंगों की कार्यप्रणाली,

व्यक्तित्व, विचारधारा, सोचने, अनुभव करने का ढंग निर्धारित होता है। इसी से हमारी आदतें तथा अच्छी-बुरी पूर्वाग्रहों से प्रभावित प्रतिक्रियाएँ भी निर्धारित होती हैं। हम इस *स्ट्रोमा* में परिवर्तन ला सकते हैं, यदि हम इसकी विधि जानते हैं।

अस्वस्थ शारीरिक सामंजस्यों से मुक्ति पाने का सबसे उत्तम उपाय सम्भवतया यही है कि स्वास्थ्यवर्द्धक मनोकायिक लयों को विकसित किया जाए। सदियों से आन्तरिक क्रियाकलापों तथा अनुभवों में सुधार लाने हेतु रसायन, शॉक उपचार, व्यवहार के नये ढंग, मनोवैज्ञानिक विधियाँ प्रयोग में लाई जा रही हैं, परन्तु कोई विशेष सफलता नहीं मिली है। वास्तव में इनसे स्ट्रोमा या मानसिक संरचना में कोई परिवर्तन नहीं आता।

आन्तरिक लयों को बदलने हेतु योग की विधियाँ बहुत धीरे-धीरे, परन्तु ठोस प्रभाव डालती हैं। इनका उद्देश्य आमूल परिवर्तन लाना नहीं होता। ये वर्तमान दैनिक जीवन की स्थितियों को धीरे-धीरे बदलती हैं। ये शरीर के प्राकृतिक अन्तर्निहित लयों को सबल बनाने के लिए नियमित सुसंगत, मृदु तथा अनुकूल प्रभाव डालती हैं। ये प्रकृति के सिद्धांतों के अनुरूप ही कार्य करती हैं, न कि इनके विपरीत। यही कारण है कि योग का अभ्यास कुछ ही मिनट के लिए सही, परन्तु नियमित रूप से प्रतिदिन किया जाना चाहिये।

जब हम सूर्य नमस्कार का नियमित अभ्यास करते हैं तब हमारे जीवन में कुछ नये तत्त्वों का समावेश हो जाता है, यथा – क्रमबद्ध शक्ति संचालन, शरीर को शुद्ध करने वाले आसनों का समूह, श्वसन, मंत्र तथा चक्र उद्दीपन। यह रोज सुबह जलपान से पूर्व कोई टॉनिक लेने की तरह ही है। मानो हम प्रतिदिन प्राण के कुछ कणों का इंजेक्शन ले रहे हों। चयापचय, स्नायविक कार्यप्रणाली, अन्तःस्रावी हारमोन का स्राव, सभी दैनिक कार्यकलाप अपने सामान्य स्वाभाविक स्थिति में क्रियाशील रहते हैं, परन्तु ऐसे नवीन घटक का समावेश हो जाने से महीनों तथा वर्षों में शरीर के लयों में सूक्ष्म परिवर्तन आ जाता है। जिस प्रकार आहार में थोड़ा-सा नमक मिला देने से उसका स्वाद बदल जाता है, सूर्य नमस्कार का प्रभाव भी कुछ-कुछ इसी तरह का होता है।

वर्तमान अस्वस्थ जैव लयों पर सूर्य नमस्कार द्वारा स्वास्थ्यप्रद, स्वाभाविक व्यवस्थित जैव लय को आरोपित करने का प्रभाव बहुत आश्चर्यजनक होता है। अनुसंधानकर्ता टी.पासेक तथा डब्ल्यू रोमानोव्स्की के अनुसार मनोव्याधि-

निरोधक विधियों का, जिसमें सूर्य नमस्कार के आसन भी सम्मिलित हैं, उद्देश्य शिथिलन तथा व्यावहारिक स्थितियों का ऐसा व्यवस्थित क्रम उपस्थित करना है, जिनके लक्षण किसी जैव लय के लक्षणों के समान हैं। उनके अनुसार यह लय एक 'नियंत्रित लय' है, जो आन्तरिक लयों से भिन्न है। इस विधि के अनुसार आन्तरिक सामंजस्य की स्थिति में उसी प्रकार वांछित परिवर्तन लाना सम्भव है, जिस प्रकार रेडियो का सेलेक्टर मिलती हुई आवृत्तियों में परिवर्तन कर देता है।

सूर्य नमस्कार हमारे शरीर की आन्तरिक रहस्यपूर्ण प्रणालियों पर नियंत्रण प्राप्त करने तथा उनके बीच सामंजस्य लाने का एक सशक्त साधन है। हम स्वयं भी अपनी सीमित, अनुचित तथा तनावग्रस्त प्रतिक्रियाओं से मुक्ति पाकर अधिक रचनात्मक, संतुलित तथा स्वाभाविक जीवन का आनन्द लेने लगते हैं। यह जीवन प्रकृति के सौर लयों के अनुरूप ही होता है।

चिकित्सीय सिद्धांत

योग चिकित्सा में सूर्य नमस्कार एक अनुकूलनशील तथा शक्तिशाली अभ्यास है। कई रोगों में इससे लाभ पहुँचता है। इसका अभ्यास सरल तथा आनन्ददायक है तथा इसको करने में अधिक समय भी नहीं लगता। अत: रोगी भी इसे प्रसन्नतापूर्वक करते हैं।

पिछले अध्यायों में हमने इस तथ्य का अध्ययन किया है कि सूर्य नमस्कार किस प्रकार शारीरिक अवयवों में नवजीवन का संचार करता है एवं वर्तमान जीवन-पद्धति की माँगों तथा तनावों के बीच हमें किस प्रकार एक क्रियाशील जीवन व्यतीत करने में सहायता प्रदान करता है। अच्छा शारीरिक स्वास्थ्य अच्छे मानसिक स्वास्थ्य की पूर्वापेक्षा है और इस हेतु सूर्य नमस्कार रोग निरोधक का कार्य करता है। हमें नहीं भूलना चाहिये कि रोग का इलाज करने की अपेक्षा उसकी रोकथाम का महत्त्व बहुत अधिक है।

इस अध्याय में हम सूर्य नमस्कार के चिकित्सकीय पक्ष की चर्चा करेंगे कि किस प्रकार यह रोगों का प्रतिरोध करता है, शारीरिक क्रियाओं को व्यवस्थित रखता है, शरीर में ऊर्जा के प्रवाह को बनाये रखता है तथा मानसिक संतुलन कायम रखता है। मानसिक स्वास्थ्य के लिये सूर्य नमस्कार की भूमिका उससे कहीं अधिक है, जितना सामान्यतया समझा जाता है। कुछ विशेष परिस्थितियों जैसे – मानसिक विक्षिप्तता को नियंत्रित करने के लिए यह अत्यंत प्रभावी तथा शक्तिशाली विधि है। दुर्व्यवस्थित ऊर्जाओं के कारण अनेक स्नायविक तथा मानसिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। इन्हें पुनर्व्यवस्थित करने में इसका योगदान बहुमूल्य है।

यद्यपि सूर्य नमस्कार कुछ व्याधियों – विशेषतया कम ऊर्जा से होने वाले मनोकायिक रोगों तथा कुछ अपकर्षक रोगों से मुक्ति दिलाने में अत्यंत सक्षम

है, फिर भी उपचार के उद्देश्य से इसका उपयोग बहुत सोच-समझ कर करना चाहिये। किसी आरोग्यकर वातावरण में किसी कुशल योग शिक्षक के निर्देशन में इसका अभ्यास किया जाना चाहिये। इसके अभ्यास से प्राण प्रवाह की मात्रा में बहुत वृद्धि होती है।

रोगमुक्त होने की प्रक्रिया को धीमा तथा नियंत्रित होना आवश्यक है। अन्यथा इससे अनेक कष्ट तथा समस्यायें उत्पन्न हो सकती हैं, जैसे– फोड़े-फुंसियाँ, ददोरे, सर्दी-जुकाम या अतिसार। कुछ अन्य उग्र स्थितियों में जैसे–उच्च रक्तचाप, हृदय-आघात, परिहृद धमनी रोग, आँतों की टी.बी. अथवा दुर्बल शारीरिक संस्थान में सूर्य नमस्कार के अभ्यास के परिणामस्वरूप अतिरिक्त ऊर्जा निर्मुक्त होती है। सम्भव है कि सभी ऊर्जा निर्मुक्त हो जाये और शरीर के कुछ महत्त्वपूर्ण अवयवों को क्षति पहुँचे। जिस प्रकार एक फटे पाइप को अतिरिक्त आंतरिक दबाव सहन करने योग्य बनाने हेतु पहले उसमें वेल्डिंग करना आवश्यक है, उसी प्रकार आरोग्य लाभ की प्रक्रिया क्रमिक तथा सुनियोजित ढंग से ही होनी चाहिये। इसके लिए पर्याप्त अनुभव की आवश्यकता है।

सिद्धांतत: कोई भी चिकित्सा किसी डॉक्टर या योग शिक्षक के योग्य निर्देशन में ही की जानी चाहिये।

कुछ व्याधियाँ–जिनमें सूर्य नमस्कार प्रभावी है

इन व्याधियों में सूर्य नमस्कार से लाभ पहुँचता है–मुँहासा, फोड़े-फुंसियाँ, रक्ताल्पता, कम भूख लगना, दुर्बलता, स्थूलता, कम विकास होना, स्फीत शिरा, गठिया, सिरदर्द, दमा तथा फेफड़े की अन्य विकृतियाँ, पाचन संस्थान की व्याधियाँ, अपच, कब्ज, गुर्दे संबंधी व्याधियाँ, यकृत की क्रियाशीलता में कमी, निम्न रक्तचाप, मिर्गी, मधुमेह, त्वचा की बीमारियाँ (एक्जिमा, सोरायसिस, सफेद दाग), सामान्य सर्दी-जुकाम का बचाव, अन्त:स्रावी ग्रंथियों में असंतुलन, मासिक धर्म तथा रोगनिवृत्ति संबंधी समस्यायें, मानसिक व्याधियाँ (जैसे–चिंता, अवसाद, विक्षिप्त, मनोविकृति) इत्यादि। सामान्य शारीरिक विकास तथा उसकी गति में वृद्धि लाने के लिये भी यह अभ्यास प्रभावी है।

चिकित्सा का आधार

मानव शरीर अनेक ऐसे अवयव संस्थानों से मिलकर बना है, जो विशिष्ट शारीरिक कार्य सम्पन्न करने तथा सम्पूर्ण संस्थान को स्वस्थ रखने हेतु साथ-

साथ क्रियाशील रहते हैं। यद्यपि महत्त्वपूर्ण प्रक्रियायें, जैसे, पाचन, रक्त संचरण आदि स्वतंत्र रूप से क्रियाशील नहीं होती हैं। ये विभिन्न अन्योन्याश्रित अवयव संस्थानों की संतुलित पारस्परिक क्रिया के परिणाम हैं। किसी भी अवयव या गतिविधि में असंतुलन का प्रभाव सम्पूर्ण शरीर पर पड़ता है। उसका अवश्यम्भावी परिणाम व्याधि है।

शरीर के विभिन्न संस्थानों में बाधा उत्पन्न होने के अनेक कारण हैं– जन्मजात, निओप्लास्टिक (कैंसर), कोई सदमा, चयापचयी, एलर्जी संबंधी, चिकित्साजन्य, औषधिजन्य, अन्त:स्रावी एवं स्नायु संबंधी। इसके अतिरिक्त मनोकायिक वर्ग का एक और बड़ा समूह है, जिसमें मन के कारण शरीर में स्थूल परिवर्तन तथा व्याधियाँ प्रकट होती हैं। व्याधियों के अनेकानेक सम्भावित कारणों के अतिरिक्त अनेक अज्ञात कारण भी हैं।

योग के दृष्टिकोण से अस्वस्थ होने का कारण है–शरीर के ऊर्जा संस्थानों में असंतुलन। कोई व्यक्ति कितना ही बुद्धिमान् या व्यवस्थाप्रिय हो, यदि उसके ऊर्जा संस्थान सामान्य ढंग से क्रियाशील नहीं हैं तो उसे व्याधिग्रस्त होना ही है। बहुधा अनेक बीमारियाँ बिना किसी पूर्वाभास के प्रकट हो जाती हैं। परन्तु ऐसी व्याधियाँ वर्षों से शरीर की अनुवांशिक संरचना में सुप्तावस्था में अथवा मन के गहरे तथा अवचेतन भाग में छिपी रहती हैं। अत: व्याधिमुक्त होने के लिए यह बात महत्त्वहीन है कि व्याधि का बाह्य कारण क्या है? मुख्य बात यह है कि मन और शरीर के प्रभावित अंगों को नियंत्रित करने वाले तथा स्वास्थ्य विकास के लिए उत्तरदायी ऊर्जा संस्थानों में पुनर्संतुलन स्थापित किया जाये। इस संबंध में हम शक्ति प्रवाह (इड़ा तथा पिंगला) पर विचार करेंगे।

नाड़ियों में असंतुलन

हममें से अधिकतर लोग सम्पूर्ण स्वास्थ्य (आध्यात्मिक जागृति के द्वार हैं) को प्राप्त नहीं कर सकते। ऊर्जा, मनोदशा, स्वस्थ तथा अस्वस्थ की समयावधियों तथा जीवन के सामान्य उतार-चढ़ाव के परिवर्तनों से हम निरन्तर प्रभावित होते रहते हैं। यही सामान्य जीवन प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया को योग में इड़ा से पिंगला तथा पिंगला से इड़ा में ऊर्जा के स्थानान्तरण के नाम से जाना जाता है। यह प्रक्रिया निरन्तर होती रहती है और अनुमानत: 90 मिनट के एक चक्र में पूरी होती है। अर्थात् सामान्यतया इड़ा तथा पिंगला नाड़ी दोनों 90-90 मिनट

तक चलती हैं। एक समय में शायद ही कभी कुछ मिनटों से अधिक संतुलन की सात्त्विक स्थिति आती हो। यह संतुलन की स्थिति उस समय आती है जब ऊर्जा का प्रवाह एक से दूसरी नाड़ी में स्थानान्तरित होने वाला होता है।

जब ऊर्जा स्थानान्तरण की गति अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ व्यक्तियों के ऊर्जा स्थानान्तरण की सामान्य गति-सीमा से अधिक हो जाती है या जब ऊर्जा स्थानान्तरण किसी निश्चित क्रम से नहीं होता तो रोग की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उदाहरणस्वरूप, यदि हम अपने विचारों में अथवा जीवन की कुछ घटनाओं में बहुत अधिक खोये रहेंगे, तो हमारे अन्दर निरन्तर मानसिक ऊर्जा का प्रवाह होता रहेगा। सम्भव है, यह हमारे अनुकूल न हो। यह विक्षिप्तता की एक अवस्था है। आन्तरिक मानसिक दबाव की तीव्रता के कारण पहले से ही निर्बल तथा असंतुलित मस्तिष्क में विकार उत्पन्न हो सकता है एवं मनोविक्षिप्तता की स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है।

अपनी जीवनशैली के माध्यम से हम बहिर्मुखी जीवन (जिसमें पिंगला नाड़ी की प्रबलता रहती है) अथवा अन्तर्मुखी जीवन, (जिसमें इड़ा नाड़ी की प्रबलता रहती है) व्यतीत कर सकते हैं। बहुत अधिक तनाव न रहने पर भी इस स्थिति के कारण जीर्ण एवं निर्बल असंतुलन स्थापित हो जाता है, जो अन्ततः तीव्र विकृति व किसी वास्तविक व्याधि का कारण बन सकता है। साथ-ही-साथ इस प्रकार का असंतुलन हमारे सुखी जीवन के लिये भी बाधक है।

पिंगला प्रधान व्यक्ति– मुख्यतः बहिर्मुखी व्यक्तियों को आन्तरिक अनुभवों की अनुभूति कम होती है। वे अपनी आन्तरिक शून्यता को बाह्य आनन्द, इच्छाओं तथा महत्त्वाकांक्षाओं से भरते रहते हैं। बाह्य सुरक्षा तथा आनन्द हेतु बाह्य साधनों पर निर्भर रहने से आन्तरिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती। इससे कुण्ठा तथा तनाव और भी बढ़ जाते हैं। इससे मनुष्य और अधिक बहिर्मुखी हो जाता है। इस प्रकार के पिंगला प्रधान व्यक्ति अपने अनुकम्पी स्नायु संस्थान से आवश्यकता से अधिक काम लेते हैं, जिस कारण अम्ल का स्राव अत्यधिक होने लगता है, अल्सर का रोग हो जाता है तथा एन्जाइना पेक्टोरिस हो जाता है या रक्तचाप बहुत अधिक बढ़ जाता है। वे निरन्तर संघर्ष की स्थिति में रहते हैं, जिससे उनकी एड्रिनल ग्रंथि से बहुत अधिक स्राव होने लगता है, परन्तु इस अतिरिक्त रासायनिक स्राव को समाप्त करने हेतु वे बहुत कम श्रम करते हैं। अन्तःस्रावी ग्रंथियों तथा चयापचय प्रक्रियाओं के असंतुलन के परिणामस्वरूप रोग उत्पन्न हो जाते हैं। साथ-ही-

साथ ऐसे व्यक्ति अशान्त तथा चिड़चिड़े हो सकते हैं तथा उनमें पारस्परिक व्यक्तिगत संबंध भी खराब हो जाते हैं।

इड़ा प्रधान व्यक्ति – अन्तर्मुखी व्यक्ति दिवास्वप्नों में खोये रहते हैं। वे सोचते तो बहुत हैं, परन्तु अपने विचारों को क्रियात्मक रूप नहीं दे पाते। ऐसे व्यक्ति अपनी भावनाओं के प्रति अत्यधिक सजग रहते हैं। पारस्परिक व्यक्तिगत अनुभवों तथा बाह्य घटनाओं के प्रति वे आवश्यकता से अधिक संवेदनशील होते हैं। उनको विपत्तियों का पूर्वानुमान करने की आदत होती है। जीवन की वास्तविकता उनसे दूर ही रहती है। बाह्य जगत् की विभिन्न स्थितियों के प्रति संतुलित दृष्टिकोण रखना उनके वश की बात नहीं है। ऐसे व्यक्ति कदाचित् ही क्रियाशील होते हैं। दक्षतापूर्वक कार्य करने हेतु इनमें इतनी पर्याप्त जीवनीशक्ति नहीं होती कि अपनी योजना को मूर्त्त रूप दे सकें। यद्यपि अपेक्षाकृत कम असंतुलित व्यक्ति क्रियाशील होकर अनेक कार्य करने लग जाते हैं। इड़ा प्रधान व्यक्ति की दशा तब पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है जब उनमें शारीरिक शक्ति बहुत घट जाती है तथा अनेक बीमारियाँ जैसे – कब्ज, अवसाद, चिंता, घावयुक्त कोलाइटिस, एक्जिमा तथा अनेक मनोकायिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं।

इस प्रकार व्याधियाँ मुख्यत: दो प्रकार की होती हैं –

1. उच्च स्तरीय शारीरिक व्याधियाँ – जो पिंगला प्रधान होती हैं – राजसिक अथवा गतिशील स्थिति।
2. निम्न स्तरीय शारीरिक व्याधियाँ – जिनमें इड़ा प्रधान होती है – तामसिक अथवा अकर्मण्यता की स्थिति।

नाड़ियों का पुनर्संतुलन

निम्न स्तरीय शारीरिक ऊर्जा की स्थिति में सूर्य नमस्कार का अभ्यास विशेष रूप से प्रभावी है। शरीर में ऊर्जा कम होने की स्थिति में प्राण शक्ति की बहुत अधिक आवश्यकता होती है ताकि व्याधियों पर नियंत्रण प्राप्त करने के लिये इससे आवश्यक शारीरिक बल प्राप्त हो सके। प्राण शक्ति से चयापचय की अपचयी प्रक्रिया को क्रियाशील बनाने में भी सहायता मिलती है ताकि एड्रिनलीन जैसे हार्मोन तथा अतिरिक्त अनावश्यक पदार्थ शरीर के अन्दर न बनने पायें। हम चयापचयी दर में वृद्धि करने की भी बात सोच सकते हैं। यह सूर्य नमस्कार का दोहरा पक्ष है – शारीरिक ऊत्तकों में रसायनों का निष्कासन

तथा अंत:कोशीय तथा कोशों के मध्य होने वाली ऊर्जा प्रक्रियाओं में वास्तविक उद्दीपन । इसी कारण सूर्य नमस्कार एक शक्तिशाली आरोग्यदायक अभ्यास बन जाता है।

निम्न स्तरीय शारीरिक ऊर्जा की दशा में शारीरिक प्रक्रियाओं पर अपनी सजगता बढ़ाकर ऊर्जा को मानसिक क्रियाओं से शारीरिक स्तर की ओर मोड़ा जाता है। हमें मात्र शरीर तथा पिंगला नाड़ी को ही क्रियाशील नहीं रखना है, वरन् अपने ध्यान तथा मानसिक शक्तियों को शारीरिक पक्ष की ओर भी केन्द्रित रखना है, जिससे मानसिक क्रियाशीलता को घटाया जा सके। इसके परिणामस्वरूप पुनर्संतुलन स्थापित होता है।

उपचारात्मक स्थितियों का एक विरोधाभास यह है कि निम्न-स्तरीय ऊर्जा की दशा में यद्यपि हमारा लक्ष्य शरीर में ऊर्जा वृद्धि करना तथा मानसिक ऊर्जाओं के क्षय को रोकना होता है, परन्तु इससे शरीर में थकावट आ जाती है। विशेषतया जब किसी भी कारण से शारीरिक ऊर्जा कम हो तो आसनों का तेजी से अभ्यास करने के लिये शारीरिक श्रम की आवश्यकता होती है। यह किसी जंग लगे पहिये को घुमाने के प्रयास के समान है। प्रारम्भ में अधिक प्रयास की आवश्यकता होती है। गति पकड़ लेने पर विशेषतया नियमित रहने की स्थिति में यह अभ्यास सरल होता है। तनाव को निम्न रखने हेतु आवृत्तियों की संख्या किसी योग्य व्यक्ति के निर्देशन में धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिये।

शरीर की थकावट का प्रभाव दोहरा होता है। पहला – अनर्गल बातों को सोचने, भावी कष्टों की निराधार कल्पना करने तथा अनावश्यक निर्णय लेकर जीवन को नष्ट करने के लिये हमारे पास ऊर्जा नहीं बचती। दूसरा – अपेक्षाकृत सरलता से निद्रा आती है। मानसिक स्तर पर बहुत अधिक कार्य करने और शारीरिक स्तर पर बहुत कम कार्य करने से गहन निद्रा में (जो कि अस्वस्थ ऊतकों को पुनरुज्जीवित करने हेतु आवश्यक है) बाधा पहुँचती है। किसी भी प्रकार की जीर्ण व्याधि से गहन निद्रा के अभाव में मुक्ति पाना लगभग असम्भव ही है। मृदु अथवा जीर्ण मनोविकृति से मुक्ति पाने का उपाय निद्रा ही है। व्याधि यद्यपि मानसिक होती है, परन्तु मस्तिष्क में पुर्नजीवन प्रदान करने हेतु गहन निद्रा की आवश्यकता होती है।

उच्च शारीरिक ऊर्जा से संबंधित व्याधियों की स्थिति में, सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते समय अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता होती है। निम्न रक्तचाप में हमें ऊत्तकों को कोई क्षति पहुँचाये बिना शारीरिक स्वास्थ्य

को बनाये रखना चाहिये। अपेक्षाकृत कम श्रम साध्य योगाभ्यासों जैसे– पवनमुक्तासन से और भी अधिक लाभ पहुँचता है।

निःसंदेह पिंगला प्रधान व्यक्ति को जो सूर्य नमस्कार का अभ्यास करता है, यह स्पष्ट अनुभव होगा कि इससे उसकी ऊर्जा की अत्यधिक मात्रा में कमी आ रही है। यह विशेषतया उस समय होता है जब वह अपने अभ्यास की गति बढ़ाता है। वस्तुतः पिंगला प्रधान लोगों में ऊर्जा की अत्यधिक मात्रा में कमी आना एक स्वस्थ स्थिति का द्योतक है। यह स्थिति उसकी ऊर्जा के पुनः दिशान्तरित होने के कारण उत्पन्न होती है। (ऊर्जा अवरुद्ध होने के कारण ही पिंगला-गुणों की प्रधानता होती है।) इस व्यवस्थापन के कारण शारीरिक और मानसिक ऊर्जा में अपेक्षाकृत अधिक संतुलन स्थापित होता है तथा ऊर्जा की गुणवत्ता में वृद्धि होती है। साथ-ही-साथ शरीर अधिक लचीला बन जाता है तथा स्नायु-संस्थान पर हमारा नियंत्रण बढ़ जाता है। इसका परिणाम होता है–दक्षता तथा संवेदनशीलता में वृद्धि। केवल पिंगला प्रधान व्याधि की स्थिति में ही हमें अधिक सावधानी रखने की आवश्यकता होती है।

उपचार में सूर्य नमस्कार

यह बात स्पष्ट हो गई होगी कि सूर्य नमस्कार शारीरिक तथा मानसिक ऊर्जाओं में पुनर्संतुलन स्थापित करता है। परन्तु यह इस बात पर निर्भर करती है कि हम इसका अभ्यास किस प्रकार करते हैं। इस तथ्य को समझकर अपनी आवश्यकतानुसार शारीरिक ऊर्जा में वांछित परिवर्तन लाया जा सकता है।

सूर्य नमस्कार के प्रत्येक अभ्यासी के लिए (तथा उपचार की दृष्टि से भी) यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि प्रत्येक स्थिति को बिल्कुल सही ढंग से करने के पश्चात् ही अगली स्थिति का अभ्यास किया जाये। उपचार की दृष्टि से जब आसन व प्राणायाम से हमारा शरीर शक्तिशाली बन जाता है तब हम इसकी प्रत्येक स्थिति में मंत्र और चक्र के प्रति जागरूक होकर इसके आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश करते हैं।

उपचार के दृष्टिकोण से प्रत्येक अभ्यासी को सूर्य नमस्कार का अभ्यास धीरे-धीरे करना चाहिये। इस स्थिति में प्रत्येक आसन के समय दो या तीन या उससे भी अधिक श्वास ली जा सकती है। इस समय शारीरिक गति के साथ श्वास का समंजस्य होना चाहिये। शरीर, उसकी सीमाओं तथा आन्तरिक

क्रियाकलापों पर श्वास के प्रभाव के प्रति सजगता भी बनाये रखनी चाहिये। इड़ा प्रधान व्यक्तियों को आवृत्तियों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिये तथा अभ्यास को तीव्रता के साथ करना चाहिये। पिंगला प्रधान व्यक्तियों को मंद गति से तथा सीमित आवृत्तियों का ही अभ्यास करना चाहिये। स्वास्थ्य में प्रगति होने पर अभ्यास की गति में वृद्धि की जा सकती है। शरीर के क्रियाकलापों में सामंजस्य लाने के उद्देश्य से आश्रम वातावरण में किसी योग्य शिक्षक के निर्देशन में इसका अभ्यास किया जाना चाहिये।

महत्त्वपूर्ण अवयवों पर प्रभाव

यद्यपि अन्त:कोशीय तथा चयापचयी ऊर्जा को आवश्यकतानुसार शरीर के अनुकूल बना लेने की क्षमता ही सूर्य नमस्कार के अभ्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष है, परन्तु इसका प्रभाव मात्र इतना ही नहीं है। इसके अभ्यास से आन्तरिक ऊत्तक-संरचनाओं को सहारा मिलता है, वे शक्तिशाली बनती हैं और उनकी मालिश हो जाती है। इस प्रकार शरीर के अंगों पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है। इससे शरीर की निष्कासन क्रिया तथा स्नायविक उद्दीपन प्रणाली को भी ऊर्जा मिलती है।

प्रत्येक अवयव संस्थान पर सूर्य नमस्कार से पड़ने वाले प्रभावों तथा लाभों की सुव्यवस्थित व्याख्या निम्नलिखित है। इससे पाठक को इन संस्थानों से संबंधित बीमारियों पर इसके प्रभाव को ठीक ढंग से समझने में सहायता मिलेगी –

श्वसन संस्थान

फेफड़ों की रचना खण्डों या उपखण्डों से हुई है। सामान्य श्वसन में शायद ही कोई सभी उपखण्डों का उपयोग करता हो। सामान्यतया फेफड़ों के केवल निम्न भाग ही उपयोग में आते हैं। ऊपरी हिस्से या तो कार्य करना बन्द कर देते हैं या उनमें उपयोग में लाई हुई वायु, कार्बन डाइ-ऑक्साइड तथा विषैली गैस जमा होती रहती हैं। ऐसा विशेषकर शहरवासियों तथा धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों के फेफड़ों में पाया जाता है। ये विषैले पदार्थ फेफड़ों में वर्षों तक पड़े रह जाते हैं, जिससे श्वसन तथा अन्य शारीरिक संस्थानों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

सूर्य नमस्कार में प्रत्येक गति के साथ लयबद्ध गहन श्वसन प्रक्रिया स्वत: होती रहती है। इससे फेफड़ों में भरी हुई दूषित वायु पूर्णत: बाहर निकल

जाती है और उनमें ताजी, स्वच्छ तथा ऑक्सीजन-युक्त वायु भर जाती है। विशेषकर ऐसा हस्तउत्तानासन की स्थिति में होता हैं, इसमें वक्ष भित्ति फैल जाती है। पादहस्तासन करते समय जब किंचित् बलपूर्वक श्वास छोड़ी जाती है, (ऐसा खुले मुँह से भी किया जा सकता है), तब यह श्वास शुद्धिकरण की शक्तिशाली विधि बन जाती है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से फेफड़ों की सभी कोशिकाएँ फैलती हैं, उद्दीप्त होती हैं और स्वच्छ हो जाती हैं। रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। इस कारण शरीर, मस्तिष्क के ऊत्तकों एवं कोशिकाओं की क्षमता तथा ऑक्सीजनीकरण में वृद्धि होती है। सुस्ती से शीघ्र ही छुटकारा मिल जाता है। श्वसन-व्याधियाँ दूर होती हैं तथा वायु मार्ग का अवांछित श्लेष्मा भी समाप्त होता है। यह अभ्यास क्षय की तरह के ऐसे रोगों से बचाव करता है, जो फेफड़ों के कम उपयोग में लाए गये तथा निश्चल भागों में उत्पन्न होते हैं।

परिसंचरण संस्थान

व्यायाम के विपरीत सूर्य नमस्कार हृदय पर बिना किसी प्रकार का जोर लगाये हुए उसकी क्रियाशीलता में वृद्धि करता है, जब कि सामान्य व्यायामों को करने से हृदय पर जोर पड़ता है। इसके अभ्यास से रक्त के प्रवाह में जो वृद्धि होती है उससे विषाक्त पदार्थों के निष्कासन की प्रक्रिया में तेजी आती है और सभी कोशिकाओं में ताजी ऑक्सीजन तथा पोषक तत्त्वों की मात्रा बढ़ जाती है। प्लीहा तथा अन्य अंगों में एकत्रित अशुद्ध रक्त समाप्त होने लगता है तथा रक्त परिसंचरण की प्रक्रिया में सुधार आता है, हृदय पेशियाँ शक्तिशाली बनती हैं तथा हृदय की रक्त वाहिकाओं व परिहृद धमनियाँ उद्दीप्त होती हैं। परिणामस्वरूप उनमें रक्त परिसंचरण ठीक होता है। हाथ-पैरों की ठण्ढक व रक्त वाहिकाओं से संबंधित रोगों तथा सामान्य थकावट से मुक्ति मिलती है।

लसिकाओं (जो तरल सन्तुलन बनाए रखने तथा संक्रमण आदि से मुक्ति दिलाने में सहायक होती हैं) में भी उद्दीपन होता है। शरीर में संक्रमण प्रतिरोधी शक्ति तथा स्वास्थ्य लाभ करने के शक्ति बढ़ जाती है।

सूर्य नमस्कार से स्वास्थ्य में सुधार आता है तथा तनाव में कमी आने के कारण बिम्बाणुओं की चिपचिपाहट (जिससे रक्त का थक्का बनता है) घट जाती है। साथ-ही-साथ परिसंचरण भी सुचारु रूप से होने लगता है। इन सबका परिणाम यह होता है कि धमनियों का कड़ापन तथा इसके कारण होने

वाली अन्य बीमारियाँ जैसे – हृद धमनी रोग, हृदय का दौरा, वृद्धावस्था की दुर्बलता, वृक्कीय दोष, अंगों में रक्त की कमी होना इत्यादि की सम्भावना कम हो जाती है।

पादहस्तासन तथा पर्वतासन में पैर की पेशियों में खिंचाव तथा (उल्टी स्थितियों के कारण) गुरुत्वाकर्षण शक्ति का उपयोग होता है। इससे शरीर के निम्न भागों से हृदय में रक्त वापस पहुँचने में सहायता मिलती है। अन्य आसन अवयवों से रक्त बाहर निकाल देते हैं तथा शरीर-कोशिकाओं और रक्त-वाहिनियों के मध्य उत्सर्जक पदार्थों के निर्माण हेतु भोजन व ऑक्सीजन के विनिमय में सहायता करते हैं।

पाचन संस्थान

सूर्य नमस्कार की स्थितियों में बारी-बारी से खिंचाव तथा संकुचन होता है। इस कारण उदर के सभी आंतरिक अवयवों की अच्छी तरह से मालिश हो जाती है तथा सम्पूर्ण पाचन संस्थान शक्तिशाली बनता है। उदर अवयवों के संकुचन तथा उद्दीपन के दृष्टिकोण से पादहस्तासन तथा भुजंगासन विशेष रूप से प्रभावकारी है। इससे न केवल निष्कासन प्रक्रिया तेज होती है, बल्कि जठराग्नि भी बढ़ जाती है। परिणामस्वरूप भूख अच्छी तरह से लगती है, आहार का पूरा-पूरा तथा तेजी से स्वांगीकरण होता है। समूचे स्वास्थ्य हेतु उचित पाचन एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। भोजन का पाचन तथा स्वांगीकरण ठीक न रहने पर आहार की गुणवत्ता या मात्रा का कोई महत्त्व नहीं रह जाता है। बिना पचे हुए आहार के आमाशय तथा आँतों में सड़ने के कारण गैस बनने लगती है तथा समस्त शरीर एवं निष्कासन मार्गों में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। उचित आहार लेते हुए योग की सहायता से पाचन समस्याओं (जैसे – कब्ज, अपच, अतिसार तथा मंद यकृत) से अपना बचाव करना तथा उनसे मुक्ति पाना सम्भव है।

उत्सर्जक संस्थान

शरीर में जल तथा नमक के नियमन में गुर्दे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। गुर्दे रक्त की अशुद्धियों का संग्रह करके उन्हें मूत्र के साथ मूत्राशय के मार्ग से उत्सर्जित करते हैं। गुर्दों के सामान्य क्रियाकलाप में यदि किसी प्रकार का व्यवधान होता है तो इससे नमक की मात्रा में तेजी से असंतुलन आ जाता है तथा रक्त के नाइट्रोजन स्तर में वृद्धि हो जाती है। परिणामस्वरूप गंभीर रोग

उत्पन्न हो जाते हैं। सूर्य नमस्कार के अभ्यास में मेरुदण्ड तथा पीठ की पेशियों पर ऐसा प्रभाव पड़ता है, जिससे गुर्दे दबते हैं तथा उनकी हल्की मालिश हो जाती है। इससे उनकी क्रियाशीलता में वृद्धि होती है तथा इनमें होने वाला रक्त प्रवाह भी बढ़ जाता है। यदि गुर्दों की क्रियाशीलता मन्द पड़ गई है अथवा थोड़ी भी खराबी आ गई हो या पथरी बनने या संक्रमण (जिसमें गंदा तथा बदबूदार मूत्र आता है, बार-बार पेशाब लगती है तथा गुर्दों में दर्द होता है) की सम्भावना हो गई है तो अधिक मात्रा में ताजा पानी पीना चाहिये। इस स्थिति में एक गिलास पानी पीकर धीरे-धीरे सूर्य नमस्कार करना चाहिये। भुजंगासन, अष्टांग नमस्कार तथा अश्व संचालन के अभ्यास उत्सर्जक संस्थान पर अच्छा प्रभाव डालते हैं।

त्वचा

त्वचा सबसे बड़ा शारीरिक अवयव है। यह सम्पूर्ण शारीरिक ढाँचे को संघटित रखने के साथ-साथ शरीर के तापक्रम के नियमन में तथा पसीने के रूप में विजातीय पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने में सहायक है। जब रक्त में विषाक्त तत्त्वों की मात्रा बढ़ जाती है, तब फोड़े-फुंसियाँ तथा ददोरे निकल आते हैं। सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से पसीना आता है, परिसंचरण की गति बढ़ती है तथा पाचन एवं मूत्र संस्थानों द्वारा विजातीय पदार्थों के निष्कासन में तेजी आती है। इस प्रकार शरीर की सफाई होती है तथा अभ्यासी के रूप-रंग में निखार आता है। यह स्वास्थ्य का एक महत्त्वपूर्ण लक्षण है। इसके अभ्यास से त्वचा के नीचे विषाक्त पदार्थों के जमा हो जाने के कारण होने वाले अनेक रोगों (जैसे – एक्जिमा, फुंसी) से मुक्ति मिलती है; शरीर से दुर्गन्ध का निकलना बन्द हो जाता है तथा त्वचा में होने वाले रक्त परिसंचरण में सुधार होता है।

जब उगते हुए सूर्य की तरफ मुँह करके सूर्य नमस्कार का अभ्यास किया जाता है, तब त्वचा सूर्य प्रकाश की अल्ट्रावायलेट किरणों को अवशोषित कर लेती है। सूर्योदय काल में इन किरणों की तीव्रता सबसे अधिक रहती है। ये स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक हैं तथा विटामिन 'डी' के उत्पादन के लिये भी उत्तरदायी हैं। सभी आसनों से त्वचा तथा इसके लचीले ऊत्तकों में खिंचाव आता है। इससे यह स्वस्थ बनी रहती है तथा अपना कार्य भली प्रकार करती रहती है।

स्नायु मंडल

सूर्य नमस्कार की 12 गतियों के माध्यम से मेरुदण्ड में व्यवस्थित रूप से अधिकतम स्तर तक खिंचाव तथा संकुचन आता है। इससे स्नायु जालक तथा सम्पूर्ण मेरुदण्ड में होने वाला परिसंचरण उद्दीप्त होता है।

बाह्य स्नायु मंडल के, जो केन्द्रीय स्नायु मंडल (मस्तिष्क तथा मेरुदण्ड) के बाहर स्थित होता है, दो भाग होते हैं–पहला ऐच्छिक तथा दूसरा अनैच्छिक। ऐच्छिक या कायमोटर मंडल (वॉल्यून्टरी ऑर सोमेटो मोटर नर्वस सिस्टम) क्रियाओं का संचालन करता है, जिन पर हमारा सचेतन नियंत्रण रहता है, जैसे, प्रमुख पेशीय गतियाँ। अनैच्छिक या स्वसंचालित स्नायु मंडल (इनवॉल्यून्टरी ऑर ऑटोनॉमिक नर्वस सिस्टम) द्वारा उन गतियों पर नियंत्रण रखा जाता है, जिन पर मनुष्य का सचेतन नियंत्रण नहीं रहता। हृदय की धड़कन, श्वसन, ग्रंथियों से होने वाले स्राव तथा लगभग सभी आंतरिक अवयवों के क्रियाकलाप, अनैच्छिक स्नायुओं के कार्यों के साथ-साथ उत्पन्न होने वाले आवेगों से शारीरिक आवश्यकतानुसार नियमित होते हैं। अनैच्छिक स्नायु मंडल परस्पर विरोधी दो सहायक मंडलों से मिलकर बना है–अनुकंपी तथा परानुकम्पी। इनकी संतुलित अन्योन्य क्रिया से स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है। परन्तु आधुनिक मनुष्य के स्नायुओं की कार्यप्रणाली में सन्तुलन तथा सामंजस्य का सामान्यत: अभाव है।

आन्तरिक अवयवों को उद्दीप्त करके सूर्य नमस्कार स्नायु प्रवाहों को शक्तिशाली बनाता है। इससे स्नायुओं में खिंचाव उत्पन्न होता है, मेरुदण्ड पर प्रभाव पड़ता है तथा मस्तिष्क के केन्द्रों को क्रियाशील बनाने वाले प्राण में वृद्धि होती है। अभ्यास के उपरान्त ऐसा लगता है, जैसे पूरे शरीर में ऊर्जा के कारण झुनझुनी हो रही है। सम्पूर्ण स्नायु संस्थान में क्रियाशीलता आ जाती है तथा उसमें जागृति का आभास होता है।

अन्तःस्त्रावी संस्थान

सभी संस्थानों में अन्त:स्त्रावी ग्रंथियाँ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं। शारीरिक स्तर पर घटित होने वाली सभी प्रक्रियाओं में समन्वय लाने तथा उन्हें संघटित करने में इनका योगदान होता है। फिर भी इनके बारे में अभी बहुत कम जाना जा सका है। अन्त:स्त्रावी ग्रंथियों का मुख्य कार्य है–उन हार्मोन तथा रासायनिक पदार्थों को बनाना तथा स्त्रावित करना, जो रक्त प्रवाह के साथ मिलकर किसी विशिष्ट अवयव को प्रभावित करने हेतु पूरे शरीर में फैल जाते हैं। ये अन्य अंगों को उद्दीप्त करते हुए उनकी गतिशीलता में सहायक होते हैं। ग्रंथियों पर सूर्य नमस्कार से पड़ने वाले प्रभावों का विवरण निम्नांकित है–

पीयूषिका ग्रंथि

पीयूषिका ग्रंथि शरीर की सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रंथि है। इस ग्रंथि द्वारा अन्य ग्रंथियों की क्रियाशीलता को शरीर की आवश्यकतानुसार उनके स्त्राव को उद्दीप्त करके अथवा रोक कर नियमित किया जाता है। इस ग्रंथि से अनेक हार्मोन का स्त्राव होता है, जो शरीर की वृद्धि तथा विकास पर नियंत्रण रखते हैं। सिर की ओर होने वाले रक्त-प्रवाह में वृद्धि होती है तथा इससे स्नायु मंडल पर पड़ने वाले प्रभाव के माध्यम से सूर्य नमस्कार हॉइपोथैलेमस उद्दीप्त करता है। हॉइपोथैलेमस ही पीयूषिका ग्रंथि के क्रियाकलापों का नियमन करता है। इस प्रकार सूर्य नमस्कार से इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथि व सम्पूर्ण शरीर पर प्रत्यक्ष रूप से लाभदायक प्रभाव पड़ता है। विपरीत आसनों का इस ग्रंथि पर अत्यंत शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है।

पीनियल ग्रंथि

पीनियल ग्रंथि मस्तिष्क में एक नन्हीं-सी ग्रंथि है। योग के अनुसार यह ग्रंथि भौतिक स्तर से ऊपर तथा परे की सजगता के विभिन्न स्तरों के बीच सम्पर्क बनाये रखती है। इस ग्रंथि को उद्दीप्त करके मन की गहराइयों से सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है। साथ-ही सजगता, अन्तर्ज्ञान, मानस दर्शन एवं कल्पना जैसी क्षमताओं (जो व्यक्ति में अन्तर्निहित है) का विकास किया जा सकता है। यह ग्रंथि तृतीय नेत्र के रूप में जानी जाती है। इस ग्रंथि को भी स्वस्थ रखने में विपरीत आसनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

बच्चों में यह ग्रंथि क्रियाशील होती है, क्योंकि वे मुख्यत: अन्तर्ज्ञान तथा सहज जागरूकता के स्तर पर कार्य करते हैं। सात वर्ष की अवस्था तक बच्चों में जो मानसिक प्रारूप बन जाते हैं, वही पूरे जीवन भर बने रहते हैं, परन्तु आयु बढ़ने के साथ-साथ अहं तथा बुद्धि उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव डालना प्रारम्भ कर देते हैं। पीनियल ग्रंथि का आठ वर्ष की अवस्था से क्षरण होना प्रारम्भ हो जाता है। सूर्य नमस्कार इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथि की, जो मानव की उच्चतम अतीन्द्रिय शक्तियों का द्वार है, रक्षा करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

चुल्लिका ग्रंथि/उपचुल्लिका ग्रंथि

गले में स्थित चुल्लिका ग्रंथि चयापचय की दर अथवा ग्रहण किये गये भोजन के शरीर द्वारा ऑक्सीकरण की गति को नियंत्रित करता है। शरीर के तापक्रम में वृद्धि तथा विकास का नियमन इसी ग्रंथि के स्राव द्वारा होता है। चुल्लिका ग्रंथि की क्रियाशीलता में कमी आने (चुल्लिका अल्पक्रियता–हाईपोथायरॉइडिस्म) के परिणामस्वरूप सामान्यत: सभी शारीरिक प्रक्रियायें मन्द पड़ जाती हैं। प्रभावित व्यक्ति स्थूलकाय, अकर्मण्य, सुस्त और उदास हो जाता है। उसे लगातार ठण्ढ लगती है तथा वह कब्ज एवं निम्न रक्तचाप से पीड़ित रहता है। गंभीर स्थिति में मानसिक विकास भी अवरुद्ध होता है।

इससे विपरीत परिस्थिति (जिसे चुल्लिका अतिक्रियता–हाईपरथायरॉइडिस्म) में सभी क्रियाओं की गति असामान्य रूप से बढ़ जाती है। प्रभावित व्यक्ति अधिक खाने लगता है, यद्यपि उसका वजन घटता जाता है तथा वह सदैव भूख महसूस करता है। वह व्यग्र, उत्तेजनशील तथा

अति संवेदनशील बन जाता है तथा उच्च रक्तचाप से पीड़ित रहने लगता है। गम्भीर स्थितियों में स्नायु विकारों से ग्रस्त हो जाता है, जिनके मुख्य लक्षण हैं–मतिभ्रम, ऐंठन, दौरे, बाहर निकले हुए नेत्र गोलक। असंतुलित चुल्लिका ग्रंथि की स्थितियाँ विशेषकर महिलाओं में पाई जाती है।

चुल्लिका ग्रंथि की असाधारण असंतुलन-जन्य स्थितियों से ग्रसित लोगों की संख्या बहुत है। वे रोग की सामान्य सीमा के अन्दर रहते हैं, फिर भी उनका दैनिक जीवन अशान्त हो जाता है। वे रोगी तो नहीं रहते, परन्तु अशांति तथा बैचेनी का सामना उन्हें करना पड़ता है। ऐसे व्यक्तियों को सूर्य नमस्कार से विशेष लाभ होता है। दुर्भाग्यवश अनेक लोग अपनी समस्याओं के कारणों से परिचित नहीं होते। वे यह भी नहीं जानते कि आसनों द्वारा अपनी समस्याओं से मुक्ति पा सकते हैं। सूर्य नमस्कार की शारीरिक गतियों में गले का भाग दबता है तथा उसमें खिंचाव उत्पन्न होता है। इससे इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथि (जो विशुद्धि चक्र से संबद्ध है) के सामान्य संतुलित स्राव उद्‌दीप्त होते हैं।

उपचुल्लिका ग्रंथि का संबंध केल्शियम तथा फॉस्फोरस के चयापचय से है। ये सबल तथा स्वस्थ हड्डियों के विकास के लिये आवश्यक है। इस ग्रंथि की अधिक क्रियाशीलता के परिणामस्वरूप हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं, जो आसानी से टूट सकती हैं। विपरीत परिस्थितियों (न्यून क्रियाशीलता) में कैल्शियम की कमी के कारण टिटैनी–पेशीय ऐंठन तथा झटका की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस ग्रंथि के क्रियाकलापों को सामान्य बनाने में सूर्य नमस्कार सहायक है। हस्त उत्तानासन, पर्वतासन, भुजंगासन व अश्व संचालनासन का गले पर प्रभाव पड़ता है।

थाइमस

थाइमस ग्रंथि चुल्लिका ग्रंथि के ठीक नीचे वक्ष में (वक्ष-दीवार के ऊपर स्थित खाँचे से लेकर नीचे वक्ष तक) होती है। बच्चों में यह ग्रंथि बहुत बड़े आकार में रहती है। अवस्था बढ़ने के साथ-साथ इसकी क्रियाशीलता तथा सम्भवत: इसका आकार भी घटता जाता है। यह हमारे शरीर के अन्दर बैक्टीरिया, वाइरस तथा अन्य बाह्य आक्रमणों तथा विभिन्न प्रकार के कैंसर की स्थितियों से रक्षा करने हेतु रोग प्रतिकारकों को उत्पन्न करती है। इस प्रकार यह ग्रंथि हमारे सांसारिक संबंधों से सम्बद्ध है।

प्रणामासन में हम प्राणों को अनाहत चक्र में भेजते हैं, जिसका भौतिक स्तर पर थाइमस ग्रंथि से संबंध रहता है। रेचक संसार को कुछ देने का संकेत है। साथ-ही-साथ यह स्थिति आत्मविश्लेषी भी है, जिसका तात्पर्य है– आत्मविकास हेतु अन्दर की ओर देखना। यह मानसिक दृष्टिकोण अनाहत चक्र के माध्यम से थाइमस को उद्दीप्त करना है तथा उसे क्रियाशील बनाता है।

अधिवृक्क ग्रंथियाँ (ऐड्रीनल ग्रन्थि)

अधिवृक्क ग्रंथियाँ संख्या में दो होती हैं। ये गुर्दों के ऊपर स्थित रहती हैं। इनसे अनेक प्रकार के हार्मोन का स्राव होता है, जिनमें सबसे प्रमुख है एड्रीनलीन। जब कभी कोई मनुष्य या पशु किसी खतरे या गम्भीर तनाव का सामना कर रहा होता है, तब इस अपात-स्थिति से निपटने के लिये यह ग्रंथि काफी मात्रा में एड्रिनलीन स्रावित करती है तथा उसे रक्त में डाल देती है। इसका सभी महत्त्वपूर्ण क्रियाकलापों पर तुरन्त प्रभाव पड़ता है। श्वसन तथा हृदय की गति बढ़ जाती है, सभी कंकाली पेशियाँ तन जाती हैं, पाचन-प्रक्रिया मन्द हो जाती है, आँखों की पुतलियाँ फैल जाती हैं, बाल खड़े हो जाते हैं, इत्यादि।

आपने कभी एकाएक उत्पन्न भय की भावना का अनुभव किया होगा। साथ ही यह भी महसूस किया होगा कि उदर के केन्द्र से सदमे की भावना विकिरित हो रही है और इसके कुछ देर बाद तक आप तनाव की स्थिति में बहुत सतर्क रहे। ऐसा एड्रिनलीन के ही कारण होता है। इस हार्मोन का अधिक स्त्राव होने से व्यक्ति निरन्तर स्नायविक तनाव से ग्रस्त तथा उदास रहता है, परन्तु उसे यह अनुभव नहीं होता कि ऐसा क्यों हो रहा है। विशेषतया आधुनिक तनावग्रस्त जीवन में यह एक सामान्य स्थिति बन गई है। दूसरी तरफ यदि इस हार्मोन का स्राव आवश्यकता से कम हुआ तो प्रभावित व्यक्ति सुस्त हो जाता है तथा बाह्य घटनाओं के संबंध में कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर पाता। यौन-हार्मोन के उत्पादन तथा नमक के चयापचय में भी अधिवृक्क ग्रंथि का योगदान होता है।

सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते समय पीठ के मध्य भाग पर सीधा दबाव पड़ता है। इसी भाग पर गुर्दे तथा अधिवृक्क ग्रंथियाँ होती हैं। इस अभ्यास से उनकी मालिश होती है तथा हार्मोन के असंतुलित स्राव भी नियंत्रित होते

हैं। फलस्वरूप अधिवृक्क ग्रंथियाँ अनुकूल स्थिति में कार्य करने लगती हैं। अधिवृक्क ग्रंथियों का संबंध मणिपुर चक्र से है।

अग्न्याशय

अग्नाशय आमाशय के पृष्ठ भाग में सौर जालक के पास स्थित है। इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथि से इन्सुलिन नामक हार्मोन से शरीर में शर्करा के संग्रह तथा उपयोग की क्रियाएँ नियंत्रित होती हैं। यदि शरीर में इन्सुलिन की मात्रा पर्याप्त नहीं होती तो ग्रहण की गई शर्करा की मात्रा का उपयोग कर पाने में शरीर असमर्थ हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप रक्त में बहुत अधिक शर्करा आ जाती है तथा वह मूत्र के द्वारा शरीर से बाहर निकलने लगती है। इस स्थिति को मधुमेह कहते हैं।

सूर्य नमस्कार के अभ्यास से उदर के अवयवों में संकुचन होता है, जिससे अग्न्याशय पर दबाव पड़ता है। ऐसा विशेषतः भुजंगासन में पीछे झुकते समय होता है।

प्रजनन अंग

जनन ग्रन्थियाँ शुक्राणु तथा डिम्ब के उत्पादन एवं गौण यौन लक्षणों जैसे– बाल उगना, स्वर में परिवर्तन आना, इत्यादि के विकास, मासिक चक्र एवं वक्ष के विकास से संबंधित कार्य करता है।

नर एवं नारियों, दोनों के प्रजनन संस्थान के नियमन तथा स्वास्थ्य हेतु सूर्य नमस्कार एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास है। नारियों में आमाशय के अन्दर डिम्ब ग्रंथियाँ सूर्य नमस्कार के अभ्यास में उद्दीप्त होती हैं। परिणामस्वरूप मासिक धर्म संबंधी अनियमितताओं को ठीक करने तथा मासिक चक्र प्रारम्भ होने के पूर्व के तनाव के कारण होने वाले अस्वाभाविक कष्ट से मुक्ति पाने में सहायता मिलती है। इस अभ्यास से गर्भाशय व योनि भित्तियों को संभालने वाली पेशियाँ भी शक्तिशाली बनती हैं। कष्टरहित प्रसव में भी सूर्य नमस्कार का अभ्यास सहायक होता है। भुजंगासन, पादहस्तासन तथा अश्व संचालनासन का अभ्यास करने से ये भाग विशेष रूप से शक्तिशाली बनते हैं। अश्व संचालनासन में पड़ने वाले तनाव से पुरुषों की यौन शक्ति में भी वृद्धि होती है।

सार

सूर्य नमस्कार से होने वाले लाभों का यह वर्णन अनेक वर्षों से हमारे आश्रम में योग प्रशिक्षण हेतु आने वाले सभी आयु तथा जाति के सैकड़ों विद्यार्थियों पर किये गये निरीक्षणों पर आधारित है। यद्यपि सूर्य नमस्कार से विशिष्ट अवयवों तथा ग्रंथियों पर दबाव पड़ता है, परन्तु इसके अभ्यास से शरीर में पूर्ण सामंजस्य की स्थिति उत्पन्न होने से ही स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। अत: इसके चिकित्सकीय प्रभावों का मूल्यांकन विस्तृत परिप्रेक्ष्य में करना चाहिये।

इस पुस्तक में सूर्य नमस्कार के चिकित्सीय प्रभावों का वर्णन संक्षेप में किया गया है। वैज्ञानिक संदर्भों तथा प्रयोगों पर आधारित सूर्य नमस्कार के प्रभावों का विवेचन बहुत विस्तृत हो जायेगा। इस पुस्तक का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि सूर्य नमस्कार विशेषत: रोगोपचार में किस प्रकार प्रभावी सिद्ध होता है। यह योग शिक्षकों तथा डाक्टरों के लिये महत्त्वपूर्ण है। यह वर्णन अभ्यास में पूर्णता लाने के दृष्टिकोण से भी सहायक है। यह अच्छा होगा कि शरीर-रचना विज्ञान तथा शरीर विज्ञान का अध्ययन किया जाये, ताकि इस तथ्य का स्पष्ट ज्ञान हो सके कि शरीर किस प्रकार कार्य करता है। इससे हमारी शारीरिक सजगता में भी वृद्धि होगी तथा अच्छे स्वास्थ्य का मार्ग प्रशस्त होगा।

मेरुदण्ड पर प्रभाव

सूर्य नमस्कार की सभी गतियाँ मेरुदण्ड के आगे या पीछे मुड़ने से संबंधित हैं। मेरुदण्ड के इस प्रकार बारी-बारी से आगे तथा पीछे मुड़ने के कारण शरीर को जितना अधिक लाभ मिलता है, शायद ही शारीरिक विकास हेतु किये गये अन्य प्रयासों से प्राप्त हो सके। सभी योगासन सम्पूर्ण स्वास्थ्य हेतु स्वस्थ, सबल तथा लचीले मेरुदण्ड की उपयोगिता को स्वीकार करते हैं। परन्तु मेरुदण्ड का महत्त्व मात्र इतना ही नहीं है। मेरुदण्ड ही सुषुम्ना नाड़ी का मार्ग है। जाग्रत व निर्मुक्त शक्ति इसी मार्ग से सहस्रार की ओर ऊर्ध्वगमन करते समय प्रवाहित होती है।

मेरुदण्ड की संरचना तथा इसके क्रियाकलापों के गहन अध्ययन से हमें सूर्य नमस्कार के महत्त्व को ठीक से समझने में सहायता मिलेगी, मात्र शारीरिक स्वास्थ्य हेतु नहीं, वरन् आध्यात्मिक जागरण की प्रक्रिया के सन्दर्भ में भी।

संरचना तथा क्रियाकलाप

मेरुदण्ड 33 कशेरुकाओं से मिलकर बना है। ये कशेरुकायें अंग्रेजी के 'S' अक्षर के समान थोड़े-थोड़े टेढ़े आकार में एक-दूसरे के ऊपर रहती हैं। प्रत्येक कशेरुका के ऊपरी तथा निचले सिरे के सामने के भाग गोलाकार तथा सपाट होते हैं। ये सपाट एक-दूसरे से कशेरुकाओं के सिरों पर जम जाते हैं। एक स्पंजी पैड या चक्र इन सपाट हिस्सों को एक-दूसरे से अलग रखता है। कशेरुकाओं को ये पैड एक-दूसरे से थोड़ा दूर रखते हुए आघात सहने का कार्य करते हैं। मेरुदण्ड का पृष्ठ भाग खोखला होता है, जिसमें से अनेक नाड़ियाँ मस्तिष्क से होकर विभिन्न शारीरिक अंगों की ओर जाती हैं। वहाँ से कशेरुकाओं के मध्य खाली स्थान से होती हुई ये नाड़ियाँ संबंधित अंगों की

ओर फैल जाती हैं। यह सम्पूर्ण ढाँचा नसों तथा स्नायुओं की एक जटिल संरचना पर टिका होता है।

मेरुदण्ड एक वृक्ष के तने के समान है, जो सम्पूर्ण शारीरिक ढाँचे को संभाले रहता है। इस तने के ऊपरी भाग पर खोपड़ी होती है, जिसके अन्दर मानव शरीर का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग मस्तिष्क होता है। सबसे ऊपरी कशेरुका को एटलस कहते हैं, क्योंकि यह सिर को अपने ऊपर उसी प्रकार टिकाये रखता है जिस प्रकार ग्रीस का पौराणिक पात्र एटलस अपने कंधों पर धरती को रखे रहता है। दूसरी कशेरुका खूँटी की तरह की एक धुरी होती है। धुरी पर एटलस तथा खोपड़ी घूमते हैं। इस प्रकार सिर स्वतंत्र रूप से या गर्दन के साथ हिल-डुल सकता है।

वक्ष प्रदेश में पसली की हड्डियों, पेशियों तथा उपास्थियों से बने हुए विस्तृत पसलियों के पिंजरे का आधार मेरुदण्ड ही है। इससे नीचे कटि अथवा उदर प्रदेश में यह उन पेशियों हेतु लंगर का कार्य करता है जो जठरांत्र अंगों को वांछित स्थान पर बनाये रखती हैं। ये उसी प्रकार लटकती रहती है मानो मेरुदण्ड के हैंडिल वाले किसी कपड़े के बैग में कोई चीज लटक रही हो।

रीढ़ के निचले यानी सेक्रमी छोर पर श्रोणि प्रदेश है। यह पालने की तरह की हड्डियों का एक ढाँचा है। इसमें उत्सर्जन तथा जनन अंग झूलते रहते हैं। श्रोणि प्रदेश के पृष्ठ भाग में पाँच सेक्रमी कशेरुकायें मिलकर एक हड्डी का रूप ले लेती हैं। ये अपेक्षाकृत छोटी होती है। इनका भार उठाने वाले किसी क्रियाकलाप से कोई संबंध नहीं होता है। रीढ़ की गतिशीलता में भी इनका कोई सहयोग नहीं रहता। इन सेक्रमी कशेरुकाओं के सिरे पर अवशेषी पुच्छ योनि अनुत्रिका होती है।

वास्तव में रीढ़ बिल्कुल सीधी नहीं होती है। इसमें चार अलग-अलग मोड़ होते हैं। ग्रीवा-मोड़ पर सात कशेरुकायें, पृष्ठीय-मोड़ (वक्ष प्रदेश) पर बारह, कटि-मोड़ (पीठ का निचला भाग) पर पाँच तथा सेक्रमी-मोड़ (श्रोणि प्रदेश) पर पाँच कशेरुकायें होती हैं। प्रत्येक निचली कशेरुका को मेरुदण्ड का भार उत्तरोत्तर अधिक वहन करना पड़ता है। इस हेतु प्रत्येक कशेरुका अपने ऊपर की कशेरुका से थोड़ी बड़ी रहती है, जिससे वह बढ़े हुए भार को वहन कर सके। उदाहरणार्थ – एटलस कशेरुका कटि कशेरुका का मात्र एक चौथाई ही होती है। इस जटिल संरचना के कारण ही मेरुदण्ड विभिन्न प्रकार से गति कर

सकता है। यह आगे-पीछे तथा बगल में मुड़ सकता है। इसे मरोड़ा या ऐंठा भी जा सकता है। इसकी सहायता से विभिन्न क्रियाकलाप करने हेतु शरीर को गति करने की बहुत अधिक स्वतंत्रता मिल जाती है।

क्रमविकास

पीठ के रोगों के कारण, मुख्यत: क्रमविकास की असंगतियों में ढूँढ़े जा सकते हैं। ये असंगतियाँ मानव के चतुष्पाद से द्विपाद होने की ओर बढ़ने के विकास क्रम में घटित हुईं। संरचना के अनुसार रीढ़ एक झूला-पुल की तरह है, जो दोनों सिरों से टिका हुआ है। मूलत: यह क्षैतिज स्थिति में कार्य करने के लिए उपयुक्त समझी गई थी, जब हम चार पैरों से चला करते थे। बाद में जब मनुष्य ने खड़े होकर दो पैरों से चलना प्रारम्भ किया, तभी से समस्यायें प्रारम्भ हो गईं। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि विकास के इस क्रम में अन्य क्षतिपूरक परिवर्तन हुए ही नहीं या समस्याओं के अन्य कारण नहीं है, परन्तु विकास क्रम की यही मूल असंगति रीढ़ से संबंधित जटिल समस्याओं का मूल कारण है।

रीढ़ लम्बरूप स्थिति में कार्य कर सके, इस दृष्टि से उसे आधार प्रदान करने के लिए पेशियों का जो विकास हुआ, वह कशेरुकाओं को आधार प्रदान करने के लिए पर्याप्त है। परिणामस्वरूप सम्पूर्ण शरीर को भी उससे आधार प्राप्त हो जाता है। परन्तु इसे पेशी-समूह का अपर्याप्त व्यायाम, मोटापा तथा शरीर की गलत संस्थिति (यथा, लगातार आगे की ओर झुककर काम करने या कुर्सी पर बैठने के समय की शारीरिक स्थिति) – ये तीन बातें रीढ़ से सम्बन्धित अधिकांश आधुनिक व्याधियों का कारण हैं।

मेरुदण्ड के सामान्य विकार

यह बात समझ लेनी चाहिए कि रीढ़ के रोगों से बचाव करने के लिए सूर्य नमस्कार सबसे उत्तम विधि है। यद्यपि इससे पीठ की अनेक समस्याओं से मुक्ति मिल सकती है, परन्तु निम्नलिखित दशाओं में कुछ अन्य आसनों का अभ्यास अधिक लाभदायक सिद्ध होगा। सूर्य नमस्कार का नियमित अभ्यास कशेरुकाओं के जोड़ों में गतिशीलता उत्पन्न करके रीढ़ को आधार प्रदान करने वाले पेशी-समूह को विकसित करके स्नायुओं को शक्तिशाली बनाकर तथा रक्त-वाहिकाओं एवं नाड़ियों की मालिश करके पीठ की

समस्याओं को उत्पन्न नहीं होने देता है। यह बात मध्यावस्था तथा उसके बाद के जीवन में और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है, जबकि पेशियाँ कमजोर तथा मेरुदण्ड कड़ा होने लगता है।

मेरुदण्ड का सबसे अधिक कष्टदायक भाग है – कटि प्रदेश (पीठ का निचला हिस्सा)। इस भाग की अनेक समस्यायें हैं। भावनात्मक, यौन तथा रजोधर्म से संबंधित तनाव उत्पन्न होने से पराकशेरुका पेशियाँ कड़ी तथा कष्टदायक हो जाती हैं। वस्तुओं का उठाते और मोड़ते समय शरीर में असमन्वित गति होने से पराकशेरुका पेशियों में मोच आ जाती है। खेलते समय अत्यधिक धक्कों या खिंचाव के कारण रीढ़ के स्नायु टूट-फूट जाते हैं। यदि नीचे के शारीरिक अवयवों में किसी रोग के कारण दोनों पैरों पर शरीर का बोझ समान रूप से नहीं पड़ता, तो पेशियाँ असंतुलित हो जाती हैं। सम्भवत: पीठ के निचले भाग में दर्द का सबसे सामान्य कारण है – गलत शारीरिक स्थिति, व्यायाम का अभाव तथा अधिकांश समय बैठे रहने की आदत या विवशता।

मोटे व्यक्तियों में उदर की दीवार अथवा आँतों के संयोजक तंतु में अधिक चर्बी इकट्ठा हो जाने के फलस्वरूप कटि प्रदेश में अतिरिक्त तनाव पड़ता है। स्नायुओं में खिंचाव हो जाता है और कमजोरी के लक्षण उभरने लगते हैं। सिद्धांतत: ऐसा इसलिए होता है कि मोटे व्यक्ति बहुत अधिक खाते हैं और पर्याप्त व्यायाम भी नहीं करते हैं।

आघात सहने वाले मेरुदण्डीय चक्र के उपास्थीय छल्ले फट जाने तथा कशेरुकाओं के बीच स्थित स्नायुओं पर दबाव पड़ने के कारण स्लिप्ड डिस्क तथा सायटिका जैसी व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। यह स्थिति अत्यन्त कष्टदायक होती है। यदि मेरुदण्डीय चक्र का ह्रास होने लगता है तो दो कशेरुकाओं के मध्य घर्षण के परिणामस्वरूप कशेरुकाओं में और अधिक अपविकास और टूट-फूट के लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। इससे बहुत अधिक पीड़ा होती है।

सूर्य नमस्कार के अन्तर्गत आगे झुकने वाले आसनों का अभ्यास करने से स्लिप डिस्क तथा सायटिका तथा चक्र अपविकास की व्याधियों में शारीरिक दशा पहले से भी अधिक बिगड़ जाती है। अत: इन व्याधियों में आगे झुकने वाले आसनों का अभ्यास न करके केवल पीछे झुकने वाले आसनों को करना चाहिए।

शारीरिक संस्थिति से तथा मानसिक तनावों के कारण सिर दर्द तब होता है; जब सिर, गर्दन, या कंधों की पेशियाँ कड़ी हो जाती हैं तथा उनमें ऐंठन होने लगती है। ऐंठन का अनुभव मुलायम या कड़ी रज्जुओं अथवा गाँठों के रूप में होता है। गहरे भावनात्मक तनावों के कारण भी पेशीय ऐंठन तथा दर्द होता है, परन्तु पसली-पिंजर के द्वारा वक्ष के कसे रहने के कारण इसका उपशमन बहुत ही कठिन होता है। सूर्य नमस्कार की एकान्तर गतियाँ वक्ष, गर्दन तथा कंधों के क्षेत्रों को ढीला रखने में अत्यन्त प्रभावी हैं। इनकी सहायता से उन स्थानों के पेशीय तनाव को समाप्त किया जा सकता है, जहाँ ऐंठन का अनुभव होता है।

स्कोलिओसिस एक ऐसी दशा है, जिसमें रीढ़ में तिरछी वक्रता आ जाती है। यह वक्रता 'S' अक्षर की वक्रता के समान होती है। इस दशा में रीढ़ का एक सिरा दूसरे सिरे के तिरछे हो जाने के कारण (मानो संतुलन लाने के लिए) एक ओर को मुड़ जाता है। नितम्ब के एक ओर सरक जाने से पीठ के दोनों भागों में असमान पेशीय तनाव तथा किशोरावस्था के प्रारम्भ में पेशीय तथा कंकाली के असंतुलित विकास के कारण भी यह स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इस दशा में पीछे झुकने वाले आसन कम-से-कम किये जाने चाहिए तथा रीढ़ को सीधा खींचने के लिए आगे की ओर खिंचाव उत्पन्न करने वाले आसनों पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

रीढ़ की समस्यायें बहुसंख्यक तथा जटिल हैं। योग्य शिक्षक के निर्देशन में सूर्य नमस्कार का नियमित अभ्यास करने से रीढ़ की दशा में सुधार आता है तथा पीठ की व्याधियों से मुक्ति मिल जाती है। सामान्य स्वास्थ्य की दशा में सूर्य नमस्कार के अभ्यास के साथ मेरुदण्ड में पूर्ण गतिशीलता लाने की दृष्टि से कुछ अन्य आसन भी सम्मिलित किये जा सकते हैं, जैसे, बगल की ओर झुकने वाले आसन– तिर्यक् ताड़ासन तथा त्रिकोणासन समूह तथा मेरुदण्ड को मोड़ने वाले आसन, जैसे, अर्धमत्स्येन्द्रासन। इस प्रकार मेरुदण्ड की ओर झुकाने वाली तथा उसे मरोड़ने वाली गतियों को संचालित करने वाले आसनों का एक पूर्ण यौगिक कार्यक्रम बन जाता है।

सुषुम्ना

क्रम-विकास की प्रक्रिया में सीधे खड़े हो सकने की क्षमता के कारण मानव पशुओं से अलग हो गया। इससे उसकी स्थिति पशुओं की अपेक्षा अधिक

अच्छी बन गयी। मानव के आध्यात्मिक क्रम विकास पर भी यही बात लागू होती है। इस सन्दर्भ में कुछ रोचक तथ्य निम्नांकित हैं –

1. ऐसा कहा जाता है कि मात्र मानव योनि में ही आत्म-साक्षात्कार सम्भव है। पशु योनि में यह सम्भव नहीं है।
2. सुषुम्ना का मार्ग मेरुदण्ड के मध्य में है। इसी मार्ग में चक्र स्थित हैं। ये केन्द्र मानव की उच्चतम सजगता के विकास का संचालन करते हैं तथा उसकी पाशविक प्रवृत्तियों को समाप्त करते हैं। मेरुदण्ड के आधार पर (परन्तु मेरुदण्ड पर नहीं) सबसे निचला चक्र मूलाधार है। यह चक्र हमारी प्रकृति की आधारभूत प्रवृत्तियों का संचालन करता है। सुषुम्ना मार्ग पर स्थित मूलाधार से ऊपर के अन्य चक्र मानव के उच्चतर तथा अधिक परिष्कृत गुणों को अभिव्यक्त करते हैं। ये गुण अन्ततः मानव को उसकी सांसारिक प्रवृत्तियों से परे ले जाते हैं। प्रत्येक उच्च चक्र में उससे निचले चक्र की अपेक्षा अधिक जटिल स्नायविक संरचना होती है।

शारीरिक स्तर पर स्नायु ऊर्जा हेतु यह आवश्यक है कि मेरुदण्ड को अवरोध रहित रखा जाये, ताकि मस्तिष्क तथा शरीर के अन्य भागों के बीच आवेग संचारित होते रहें। सूक्ष्म शरीर पर इसका शुभ प्रभाव यह पड़ेगा कि जाग्रत कुण्डलिनी को मस्तिष्क की ओर ऊर्ध्वगमन करने हेतु एक अवरोध रहित मार्ग मिल जायेगा।

इस प्रकार सूर्य नमस्कार से मेरुदण्ड पर पड़ने वाला प्रभाव मात्र शरीर के संरचनात्मक स्थायित्व तक ही सीमित नहीं है। यह प्रभाव कहीं अधिक सूक्ष्म है। यह महत्त्वपूर्ण सुषुम्ना-मार्ग के शुद्धिकरण का भी द्योतक है ताकि हमारी उच्च आत्मिक ऊर्जाओं के जागरण हेतु हमारी शक्तियाँ निम्न प्रवृत्तियों के मूल से आरोहण कर सकें।

पेशियों पर प्रभाव

इस अध्याय में सूर्य नमस्कार के अभ्यास से शरीर की पेशियों (जिनमें से अधिकांश इस अभ्यास से प्रभावित होती हैं) पर पड़ने वाले प्रभाव का वर्णन किया गया है। यह अध्याय मुख्यत: योग शिक्षकों तथा योग चिकित्सकों के लिए सूर्य नमस्कार को एक उत्तम विधि के रूप में विकसित करने तथा अभ्यासकर्ताओं का अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखने में सहायता देने के उद्देश्य से लिखा गया है। यह अध्याय ऐसे व्यक्तियों के लिए भी है जो यह समझना चाहते हैं कि सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते हुए शारीरिक स्तर पर उनके साथ क्या-क्या घटित हो रहा है। इस प्रकार किस स्थिति में उन्हें किस पेशी को शिथिल करना या खींचना या किस पेशी में तनाव उत्पन्न करना है – इसकी जानकारी प्राप्त करके वे अपना अभ्यास अधिक अच्छी तरह से कर सकेंगे।

शक्ति

सूर्य नमस्कार का उद्देश्य यह नहीं है कि पेशियों की अति वृद्धि या अति विकास हो। इस अभ्यास से पेशी-कंकाली संरचनाओं में खिंचाव उत्पन्न होता है, उनका दुबारा संरक्षण हो जाता है तथा उन्हें शक्ति प्राप्त होती है। परिणामस्वरूप शरीर की संस्थिति तथा स्वास्थ्य सुधरने लगता है और शरीर के समूचे क्रिया-कलाप संघटित होकर व्यवस्थित हो जाते हैं। हमें अपनी पेशियों के बारे में उन्हें स्वतंत्र रूप में देखने के स्थान पर उन्हें शरीर के अन्य अंगों से सुसंगत स्थिति में परस्पर संबंधित रखते हुए सोचना चाहिए।

प्रत्येक पेशी अनेक तन्तुओं से बनी होती है। प्रत्येक तन्तु सरकने वाले अनेक खण्डों से मिलकर बनता है, जो सरकने वाली पटरी या दरवाजे की

भाँति एक-दूसरे पर ठीक बैठ जाते हैं। तन्तु एक निश्चित सीध में रहते हैं, जिससे पेशियाँ भली प्रकार कार्य करती हैं। यदि इस स्थिति से ये तन्तु किसी भी दिशा में हट जायें तो प्रत्येक तन्तु से समूची पेशी को जो शक्ति प्राप्त होती है, वह कम हो जाती है। पेशियों के समूह शक्ति उत्पन्न नहीं करते हैं। पेशी के तन्तुओं के सामूहिक, समन्वित, संयुक्त एवं संगठित प्रयास का ही परिणाम शक्ति है। अत्यधिक तनाव की स्थिति में पेशी तन्तुओं में पर्याप्त खिंचाव नहीं आ पाता और तब पेशियों की शक्ति तन्तुओं की संख्या पर निर्भर हो जाती है, न कि उनके संघटित प्रयासों पर। सामान्यत: पहलवानों के साथ ऐसा ही होता है। यदि पेशियों के तन्तु अधिक लम्बे हों तो वे पूर्णतया निष्क्रिय हो सकते हैं।

संतुलन

समस्त भौतिक पदार्थों पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति का प्रभाव पड़ता है। शरीर के प्रत्येक भाग तथा खंड का एक गुरुत्वाकर्षी केन्द्र होता है, जिसके चारों ओर यह क्रियाशील रहती है। प्रत्येक केन्द्र पूरे शरीर की स्थिति के अनुसार निरन्तर बदलता रहता है। सोने, बैठने, सीधे खड़े रहने या गतिशील रहने की हर स्थिति में संतुलन का सिद्धांत सदैव लागू रहता है। शारीरिक संतुलन तभी बनता है, जब गुरुत्वाकर्षण शक्ति निष्प्रभावित हो जाती है। ऐसा निम्न प्रकार से घटित होता है –

- शरीर के जोड़ों (संधियों) का एक-दूसरे पर दबाव।
- स्नायविक प्रतिरोध
- संवेदी मोटर स्नायविक प्रणाली द्वारा समन्वित दीर्घकालीन पेशीय संकुचन।

जैसे-जैसे भूमि के साथ शरीर का सम्पर्क क्षेत्र बढ़ता है, शारीरिक संतुलन भी बढ़ता जाता है, क्योंकि तब गुरुत्वाकर्षण केन्द्र नीचे की ओर चला जाता है। संतुलन एक स्थायी स्थिति नहीं है। हमारी बदलती हुई शारीरिक संस्थितियों, गतियों, श्वास-चक्रों तथा सजगता के स्तर के अनुसार ही संतुलन बनता-बिगड़ता रहता है।

शारीरिक संतुलन को बनाये रखने में मस्तिष्क के पीछे स्थित अनुमस्तिष्क की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। अनुमस्तिष्क में कानों, नेत्रों, इंद्रियों और पेशियों द्वारा प्राप्त निवेश संगठित होते हैं तथा हमारी शारीरिक संस्थिति

को निर्धारित करते हैं तथा उसे बनाये रखते हैं। ऐसा स्नायविक प्रणाली के अचेतन तथा स्वसंचालित स्तर से मिलने वाली सूचनाओं के आधार पर होता है।

मन की शांति

योग में किसी नई स्थिति में जाने से पूर्व प्रारम्भिक स्थिति के प्रति सजगता अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। मन की शांति यहाँ पर उतनी ही आवश्यक है जितनी किसी आध्यात्मिक साधना या महत्त्वपूर्ण कार्य को करने के पूर्व। उदाहरणस्वरूप, प्रणामासन में आपको इस विशेष संस्थिति में क्रियाशील पेशियों के उन अनवरत क्रियाकलापों के प्रति सजग रहना पड़ता है जो स्थिर संतुलन बनाये रखने के लिए आवश्यक हैं। इस सूक्ष्म प्रक्रिया के प्रति अपनी सजगता बढ़ाने का प्रयास करें। इससे एक नई तथा गहन सजगता का विकास होता है, जिसे आप अधिक गतिशील संस्थितियों में संतुलन बनाये रख सकते हैं। हमें पेशीय तनावों तथा शिथिलन के बीच सूक्ष्म संतुलन को विकसित करने का प्रयास करना चाहिये।

प्रणामासन

प्रणामासन मानसिक संगीत तथा स्थायित्व की संस्थिति है। यह मनुष्य के क्रम विकास की अवस्था का प्रतीक है, जब वह सीधा खड़ा होकर चलने लगा। अत: प्रणामासन में हमारा संबंध उन पेशियों से होता है जो खड़े रहने की संस्थिति बनाये रखने में मदद करती है।

अन्य महत्त्वपूर्ण पेशियाँ जो अभ्यासी को प्रणामासन की स्थिति में रखने के लिए विश्रांति का स्तर बनाए रखती हैं, ये हैं–

- *पिंडलियाँ*– सोलियस, अग्र अन्तर्जंघिका, जानुपृष्ठ
- *जाँघें*– अभिवर्तनी, घुटने के पीछे की नस, ऊरु द्विशिरस्का, सेमीटेंडीनोसस सेमीमेम्ब्रेनोसस
- *धड़*– मेरुदण्डीय तथा अग्र उदर पेशियाँ आवश्यक हैं।
- *असंफलक क्षेत्र*– समलंब, तिर्यगायत (रॉम्बॉयड)
- *ग्रीवा*– ग्रीवा तथा सिर को सीधा रखने के लिए अग्र तथा पश्च पेशियाँ आवश्यक हैं।

सीधे खड़े होने की स्थिति

सीधे खड़े होने की स्थिति में जो पेशियाँ क्रियाशील होती हैं, वे मेरुदण्ड को थामे रखती हैं। वे उसकी वक्रता को भी बनाये रखती हैं। वे पेशियाँ पैरों को कार्य करने में सहायता तथा सिर को सहारा देती हैं।

1. *पैर*– निचले पैरों के सामने की पेशियाँ, जिनकी सहायता से पैरों में खिंचाव उत्पन्न किया जाता है अथवा पंजों को उठा कर पैरों को आगे बढ़ाया जाता है, शरीर के गुरुत्वाकर्षण केन्द्र को इस प्रकार संतुलित करती है कि यह आधार की ओर तथा उसके ऊपर आ जाता है। समायोजित करने वाले इस सबसे निचले बिन्दु पर खुली आँखों से अपनी सजगता को ले आयें तथा संतुलन के लिए आवश्यक गतिशील पेशीय संतुलन की स्थिति का अनुभव करें।
2. *पुट्ठे*– मेरुदण्ड को सीधी स्थिति में रखने के लिए कटिलम्बिका पेशियाँ बहुत आवश्यक हैं। ये पेशियाँ पैरों को धड़ से जोड़ती हैं। ये कटि कशेरुकाओं की अनुप्रस्थ पेशियों की प्रक्रियाओं को ऊरु अस्थि के ट्रोकेंटर, अर्थात् ऊपरी और बाहरी ऊरु अस्थियों से भी जोड़ती हैं। यही वह पेशी है, जो धड़ के गुरुत्वाकर्षण केन्द्र को आगे तथा ऊपर एवं पैरों के मध्य में ला कर पीठ के निचले भाग के आगे की ओर लाने में मदद देती है। इस पेशी का कार्य शरीर को इस प्रकार सहायता देता है कि वह (शरीर) अपनी स्थिति को शून्य में समायोजित कर सके। यह पेशी लगातार संकुचित और विस्तृत होती रहती है, ताकि शारीरिक स्थिति समायोजित हो सके। यह निरन्तर गतिशील रहने वाली पेशी है।

   मध्यपट एक पतली क्षैतिज पेशी है और श्वसन क्रिया को संचालित करती है। इसकी क्रियाशीलता द्वारा कटिलम्बिका पेशी की क्रिया पर प्रभाव पड़ता है। मध्यपट के निचले तन्तु कटिप्रदेश के मेरुदण्ड को आगे लाने की क्रिया को सुलभ बनाते हैं। मध्यपट हर श्वसन के साथ संकुचित होता है जिससे कटिलम्बिका पेशी, शारीरिक स्थिति तथा संतुलन प्रभावित होते हैं। हम यह अच्छी तरह समझ सकते हैं कि शरीर को संचालित करने वाली इन पेशियों पर जो प्रणाली नियंत्रण स्थापित करती हैं, उसे अत्यंत सूक्ष्म तथा संवेदनशील होना चाहिए। हम यह भी समझ सकते हैं कि ऐसे तनावों से, जिनमें इन पेशियों की क्रियाशीलता कम होती है, शारीरिक गतियों में असंतुलन आ जाता है, श्रोणि प्रदेश

पर बुरा प्रभाव पड़ता है तथा शरीर में अनेक प्रकार के संरचनात्मक तथा क्रियात्मक दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

3. *धड़*– कटि चतुरस्रा का उद्भव श्रोणिशिखा तथा श्रोणिफलक कटि-स्नायु से होता है। यह सबसे निचली पसली तथा कटि प्रदेश की ऊपरी चार कशेरुकाओं से जुड़ा होता है। पैरों के ऊपर गुरुत्वाकर्षण केन्द्र का समायोजन कटि चतुरस्रा द्वारा ही होता है।
4. *मेरुदण्ड*– कशेरुका दण्ड को सीधा रखने के लिए अनुप्रस्थ प्रक्रियाओं से कशेरुका कण्टक तक तिरछी-तिरछी ऊपर की ओर जाने वाली लघु मेरुदण्ड अनुप्रस्थिका पेशियाँ ही मुख्य रूप से क्रियाशील रहती हैं। कशेरुका की अनुप्रस्थ प्रक्रियाओं तथा निकटस्थ कशेरुका के बीच जोड़ में रहने वाले अंतराकटिका के बीच की अन्तरा अनुप्रस्थिक छोटी पेशियों को आधार प्रदान करती हैं। अनुप्रस्थ कंटिका पेशियाँ मेरुदण्ड के सामने और पीछे की अन्य स्थितिज पेशियों को तंत्रिका आवेग भेजती है ताकि धड़ को सीधा और कड़ा रखने में सहयोग देने वाला दीर्घकालीन पेशीय संकुचन बना रह सके।
5. *सिर*– सिर को आगे-पीछे लाने में मदद देने वाली तथा सिर को धड़ के बीचों-बीच स्थित रखने और ग्रैवमेरुदण्ड के पृष्ठ भाग को सहारा देने वाली शिर:पट्टिका मध्य विषमिका तथा पश्च विषमिका पेशियाँ सिर को सीधा रखती हैं।

सूर्य नमस्कार की खड़ी होने वाली सभी स्थितियों में ये पेशियाँ अपनी सीधी स्थिति में काम करती रहती हैं। आगे इनका उल्लेख तभी किया जाएगा जब किसी विशेष आसन के अभ्यास के समय ये विशेष प्रकार से क्रियाशील होंगी।

प्रणामासन की स्थिति में अधिक प्रभावकारी ढंग से अभ्यास करना

इन सुझावों पर ध्यान दें–

1. पीठ के सबसे कमजोर भाग पर जोर न पड़े, इस दृष्टि से नितम्बिका पेशियों को थोड़ा सिकोड़ें, साथ-ही-साथ उदरीय भित्ति को भी अन्दर की ओर किये रहें। अनुप्रस्थ उदरिका उदरीय भित्ति की सबसे अन्दरूनी मोटी पेशी है जो श्रोणि फलक शिखा की आन्तरिक सतहों से प्रारम्भ होती है। यह पेशी उदर के अंगों पर प्रभाव डालती है। मध्यपट और अनुप्रस्थ

उदरिका के दबाव से अन्त: उदर तथा अन्त:वक्ष पर दबाव उत्पन्न होता है तथा विशेष रूप से प्रणामासन में श्रोणि प्रदेश तथा कटि प्रदेश सीधी स्थितियों में रहते हैं।

2. ग्रीवा के क्षेत्र को सीधा रखने हेतु और ऊँचाई में वृद्धि करने के लिये सिर को झुकाए बिना ठोड़ी को गर्दन के सामने थोड़ा-सा ले आएँ। उरोस्थि और हँसली से निकल कर कान के शंखास्थि के कर्णमूल भाग तक जाने वाले उरोजत्रुक कर्णमूलिका पेशियाँ ही सक्रिय रहती हैं।

सिर को उदर की ओर खींचे और शेष मेरुदण्ड पर खिंचाव का तथा ऊर्जा के ऊर्ध्वगामी प्रवाह का अनुभव करें। ऐसा अनुभव आप अनाहत चक्र के प्रति जागरूक रहने के साथ-साथ या इस जागरुकता के स्थान पर कर सकते हैं। इस अभ्यास का यह आयाम इस तांत्रिक सिद्धांत का एक उदाहरण है कि शरीर के परे पहुँचने के लिए शरीर का ही सहारा लेना पड़ता है। प्रणामासन का अभ्यास करते समय पेशियों के प्रति जागरूकता बनाए रखकर तथा शरीर में खिंचाव उत्पन्न करके हम अपनी चेतना को उर्ध्वगामी बना सकते हैं। प्रणामासन मात्र हाथ जोड़ कर प्रणाम करने की मुद्रा में खड़ा हो जाना नहीं है, यह उससे कहीं अधिक सूक्ष्म और गहन है।

हस्तउत्तानासन

सूर्य नमस्कार की स्थितियाँ 2 और 11 हस्तउत्तानासन है। इस स्थिति में सूर्य मानव के लिए जिस असीम शक्ति-क्षमता का प्रतिनिधित्व करता है उससे सम्पर्क रखने के उद्देश्य से सक्षम अभ्यासी अपने को प्रस्तुत कर देता है। उच्चतम शक्तियों का अनुग्रह तथा शक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से उनका आवाहन करने के लिए यह स्थिति बहुत दिनों से आध्यात्मिक तथा तांत्रिक परम्पराओं का एक अंग रही है। ब्रह्माण्डीय अग्नि के समक्ष अपने को प्रस्तुत करने के लिए अभ्यासी अपने सौर जालक (मणिपुर चक्र) को आगे की ओर करता है। तब उसका श्रोणि प्रदेश भी आगे की ओर आ जाता है। इस प्रकार शरीर का गुरुत्वाकर्षण केन्द्र पैरों के बीच में आगे की ओर चला आता है। तब हाथ ऊपर की ओर खींचे जाते हैं। वे कानों को स्पर्श करते रहते हैं। सिर पीछे की ओर जाता है। दृष्टि ऊपर की ओर रहती है। सामने के भाग में खिंचाव उत्पन्न होता है तथा गर्दन का पिछला हिस्सा सिकुड़ता है।

अभ्यासी को शरीर के अगले हिस्से में पूर्ण खिंचाव का अनुभव होता है, साथ-ही पिछले हिस्से में थोड़ा संकुचन भी होता है। सिर से लेकर पैर तक शरीर पीछे की ओर मुड़ जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि शक्तिशाली आध्यात्मिक शक्तियों ने शरीर को धनुषाकार मोड़ दिया है। इस स्थिति में शरीर को मुड़ने दें और विश्रांति का अनुभव करें। सीने को किंचित् आगे की ओर करें, ताकि ऊपरी पीठ का घुमाव थोड़ा सीधा हो जाए। इसे बिल्कुल सहज भाव से करने से अभ्यासी अपने को ब्रह्माण्डीय प्राण तथा अध्यात्म शक्तियों के सम्मुख प्रस्तुत कर देता है।

इस स्थिति में संतुलन बनाये रखना कठिन हो सकता है, क्योंकि हाथों को ऊपर उठाने से गुरुत्वाकर्षण केन्द्र भी ऊपर उठ जाता है। सीने को आगे की ओर करते समय यदि बहुत जोर लगाया गया तो बहुत तनाव उत्पन्न हो जाता है। अत: प्रारम्भ में इस स्थिति में बहुत धीरे-धीरे अभ्यास करें। सीने को आगे की ओर करने का अभ्यास क्रमश: करें। इस स्थिति में निम्नांकित पेशियाँ क्रियाशील होती है –

- *ऊपरी बाजू तथा कंधा* – असंफलक से प्रगण्डिका तक (ऊपरी बाजू का अस्थिल शैफ्ट्) की पेशियाँ इन अंगों को गतिशील रखती हैं। इन पेशियों के नाम हैं – बहु अंसाभिवर्तिका, लघु अंसाभिवर्तिका, त्रिकोणिका तुण्डप्रगण्डिका। कटिपार्श्वच्छदिका भी बाजू को फैलाती है। यह पेशी निचले 6 वक्ष कशेरुकाओं, सेक्रम, श्रोणिफलक शिखा के पिछले भाग तथा निचली 4 पसलियों से निकलती है और प्रगण्डिका में मिल जाती है।
- *निचला बाजू (कोहनी से कलाई तक)* – प्रगण्ड त्रिशिरस्का पेशी इस अंग को फैलाती है।
- *कलाई* – लघु करतलिका पेशियाँ अंगुलियों और हाथों को फैलाती हैं, जिससे हथेलियों में तनाव उत्पन्न होता है। अंगुलिप्रसारणी कम्यूनिस के कारण कलाई और अंगुलियों में प्रसारण होता है जोकि प्रगण्डिका, कलाई और अंगुलियों के पिछले हिस्से से उत्पन्न होता है। जैसे कि अन्तर्मणिबन्ध प्रसारणी एवं लघु तथा दीर्घ बहिर्मणिबन्ध प्रसारणी द्वारा होता है।
- *पीठ* – नितम्बों पर थोड़ा जोर डालने से समलम्बिका तथा कटिपार्श्वच्छदिका पेशियाँ संकुचित होती हैं।
- *सामने की ओर* – छाती पर अग्र दंतुरिका पर्शूका पिंजर को फैलाती हैं तथा श्वसन-क्षमता में वृद्धि करती हैं। उदर की पेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता

है। इन पेशियों में उदर के बीचों-बीच स्थित पट्टी की तरह की समोदरिका पेशी भी शामिल है। समोदरिका पेशी जघनास्थि से शुरू होकर पाँचवीं, छठी और सातवीं पसलियों, बाह्य तथा आन्तरिक तिर्यक, अनुप्रस्थ उदरिका तक जाती है।

पादहस्तासन

यह आसन स्थिति 2 से बिल्कुल उलटा है। शरीर में ऊपर की ओर सशक्त खिंचाव उत्पन्न करने के बाद अब इस स्थिति में नीचे की ओर खिंचाव उत्पन्न किया जा रहा है। दिव्य शक्तियों का आवाहन करने के बाद अभ्यासी उन्हें धरती की ओर, उसे स्पर्श करके ला रहा है। इस प्रकार वह अपने पार्थिव अस्तित्व का रूपान्तरण कर रहा है। एक प्रकार से वह गुरुत्वाकर्षण शक्ति के आगे झुक जाता है और उसका उपयोग करने लगता है।

इस निश्चेष्ट स्थिति में धड़ मुड़ने के साथ-साथ शरीर की पिछली पेशियों में अधिक खिंचाव उत्पन्न होता है। नीचे की ओर खुली हुई हथेलियों को पैरों के दोनों तरफ या शरीर के पीछे रखा जाता है ताकि पिछली पेशियाँ ओर अधिक खिंच सकें। इस आसन का अभ्यास करते समय अग्र भाग की पेशियों की निष्क्रिय रूप से मालिश हो जाती है। इस स्थिति में सिर नीचे की ओर और स्वाधिष्ठान चक्र ऊपर की ओर रहता है। इस आसन में निम्नलिखित पेशियाँ क्रियाशील होती हैं–

- *धड़*–कटिलम्बिका तथा श्रोणिफलककिका पेशियाँ (जो श्रोणि खात से निकल कर कटिलम्बिका निवेशन में आकर मिलती हैं) धड़ को आगे की ओर मोड़ती हैं।
- *उदर*–पेशियाँ शिथिल हो जाती हैं।
- *गर्दन*–उरोजत्रुककर्णमूलिका तथा विषमिका पेशियाँ (ग्रीवा-कशेरुकाओं से पहली दो पसलियों तक) सिर को आगे की ओर झुकाती हैं।
- *पीठ*–पराकशेरुका पेशियाँ, कटि प्रदेश तथा निचले वक्ष की कटिपार्श्वच्छदिका, कटि, वक्ष तथा ग्रीवा की श्रोणिफलक पर्शूका, ग्रीवा कण्टिका तथा गर्दन की शिर:कण्टिका, समलम्बिका, वृहत् असांभिवर्तिका, लघु असांभिवर्तिका, अध: अंसपृष्ठिका पेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता है।

- *बाजू*– बाजुओं और हाथों के खिंचाव के समय वही पेशियाँ क्रियाशील होती हैं जो हस्तउत्तानासन में होती हैं-विशेषत: त्रिशिरस्का।
- *नितम्ब*– लघु तथा वृहत नितम्बिका पेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता है।
- *पैर*– जाँघों के पीछे स्थित घुटने के पीछे की नस, पिंडलियों में स्थित सोलियस तथा जानुपृष्ठिका, पैरों की अंगुलियों की प्रसारिणियाँ जिनसे इस स्थिति में देर तक रहने में मदद मिलती है, इन सभी की कसरत हो जाती है।

अश्व संचालनासन

सूर्य नमस्कार के अभ्यास को आकाश के प्रति जागरूकता विकसित करने की एक विधि माना जा सकता है। स्थिति 2 तथा 3 में बाजुओं की सहायता से इस आकाश को खोजने तथा नापने का प्रयत्न करने के बाद इस स्थिति में अभ्यासी अपना एक पैर यथासंभव पीछे फैला कर इसी प्रयत्न को दुहराता है। अलग-अलग दोनों पैरों के बीच की जगह (आकाश) ही अभ्यासी के अधिकार क्षेत्र में है। इन स्थितियों में वह इसी आकाश की खोज करने का प्रयत्न करेगा। लेकिन अगली स्थिति में यह प्रयत्न करने से पूर्व वह इस आकाश को ठीक से पहचान तो ले।

शरीर की इस असममित स्थिति में निचले अंगों की पेशियाँ क्रियाशील रहती हैं। यद्यपि गुरुत्वाकर्षण केन्द्र नीचे की तरफ आ जाता है, परन्तु शरीर को संतुलित रखना अधिक कठिन हो जाता है, क्योंकि इस स्थिति का आधार बहुत चौड़ा नहीं होता और इस स्थिति में प्रतिसाम्य भी नहीं होता। पैरों के बगल में हाथों को रखने से आधार कुछ चौड़ा हो जाता है तथा संतुलन की क्रिया अपेक्षाकृत सरल हो जाती है। पीठ और सिर को पीछे ले जाते समय वही पेशियाँ क्रियाशील होती हैं जो हस्तउत्तानासन में होती हैं। अन्तर यह है कि अश्व संचालनासन में शरीर की गति अधिक स्पष्ट होती है तथा बाजू जमीन की ओर नीचे आ जाते हैं।

इस स्थिति में सबसे अधिक खिंचाव जाँघ के सामने के भागों, नितम्बों, उदर पेशियों, पीठ और गर्दन पर पड़ता है।

इस अवस्था में पैरों की दो स्थितियाँ होती हैं–

- *आगे वाला पैर*– टखने का अभिपृष्ठ आकुंचन, घुटने और पुट्ठे का आकुंचन। वृहत् नितम्बिका तथा घुटने के पीछे की नस में खिंचाव उत्पन्न होता है। पैर की अन्य पेशियाँ शिथिल हो जाती हैं।

- *पीछे वाला पैर* – अँगुलियों पर शरीर का टिकना, टखने का भीतर की ओर आकुंचन, घुटने का हल्का-सा आकुंचन। ऊरु चतु:शिरस्का तथा कटि लम्बिका पेशियों में खिंचाव होता है।

पर्वतासन

जैसा कि नाम से विदित होता है इस स्थिति में स्थायित्व तथा प्रतिसाम्य होता है। यह अर्द्धविपरीत आसन है। इसमें दूसरा पैर भी पीछे की ओर लाते हुए आधार की चौड़ाई को बढ़ाया जाता है और इस प्रकार शरीर को संतुलित किया जाता है। इस स्थिति में गर्दन के पीछे पीठ के ऊपरी भाग में तथा पैरों के पिछले हिस्से में सबसे अधिक जोर पड़ता है। बाजू भी मजबूत बनते हैं। इसका अभ्यास करते समय बाजू की ही पेशियाँ सक्रिय होती हैं। शेष खिंचाव निष्क्रिय रहता है। खिंचाव से प्रभावित पेशियाँ निम्नांकित हैं –

- *पिंडली* – सोलियस, जानुपृष्ठिका, टखने के पीछे की अचिलस कंडरा।
- *जाँघें* – घुटने के पीछे की नस। नितम्बों में किंचित् खिंचाव पड़ता है।
- *धड़* – उदर पेशियों में किंचित् तनाव उत्पन्न होता है। प्रभावित होने वाली पीठ की मुख्य पेशियाँ हैं – उर:द्राधिष्ठिका, समलम्बिका, कटिपार्श्वच्छदिका, बाजुओं की गति में भी सक्रिय रहने वाली वृहत् व लघु असंभाभिवर्तिका पेशियाँ। कंधों की पेशियाँ सक्रिय रूप से सिकुड़ती हैं, क्योंकि बाजू सीधे और तने हुए रहते हैं।

अष्टांग नमस्कार

यह स्थिति पार्थिव बंधनों के आगे झुक जाने की प्रतीक है। इसका अभ्यास करते समय निम्न पेशियाँ क्रियाशील होती हैं –

- *टखने और पैरों की अँगुलियाँ* – पैरों की अँगुलियाँ निष्क्रिय रूप से तन जाती हैं तथा दीर्घ पादांगुलि प्रसारिणी और दीर्घ पादांगुष्ठ प्रसारण पेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता है। इसी प्रकार टखने भी निष्क्रिय रूप से तन जाते हैं तथा अन्तर्जंघिका पेशी खिंचती है।
- *घुटने* – जाँघों के पीछे स्थित घुटने के पीछे की नस से घुटनों में आकुंचन उत्पन्न होता है।

- *ऊपरी पैर*– वृहत् कटिलम्बिका तथा श्रोणिफलकिका से जाँघ में तथा लघु कटिलम्बिका से धड़ में आकुंचन उत्पन्न होता है।
- *गर्दन*– ग्रैवीद्राधिष्ठिका ऊपरी चौथी और पाँचवीं वक्ष कशेरुकाओं से लेकर दूसरी से छठी ग्रीवा कशेरुकाओं तक पेशी से गर्दन पीछे की ओर मुड़ती है। शिर:द्राधिष्ठिका पेशी जो पश्चकपाल तथा सातवीं ग्रीवा कशेरुका से बारहवीं वक्ष कशेरुका तथा असंफलक तक फैली रहती है, सिकुड़ती है। गर्दन के अगले भाग में खिंचाव उत्पन्न होता है।
- *बाजू*– शरीर को थामे रखने में समलम्बिका तथा वृहत् तथा लघु समचतुर्भुजिका पेशी का, जो पीठ के ऊपरी भाग में होती है, योगदान रहता है।

भुजंगासन

भुजंगासन में मेरुदण्ड तथा गर्दन को पीछे की तरफ झुकाने के उद्देश्य से पीछे की ओर झुकने वाली पेशियों का उपयोग किया जाता है। इस आसन की स्थिति में मुख्यत: हाथों और बाजुओं का सहारा लिया जाता है। इस प्रकार शरीर एक गत्यात्मक वक्ररेखा में मुड़ता हुआ पीछे की ओर आ जाता है। इस स्थिति में निम्नांकित पेशियाँ सक्रिय होती हैं–

- *बाजू*– प्रगण्ड त्रिशिरस्का पेशियाँ जो बाजुओं को सीधा करती हैं।
- *पीठ*– अंतिम स्थिति में पीठ की सारी पेशियाँ दबती हैं, परन्तु उनमें किसी प्रकार का तनाव उत्पन्न नहीं होता।
- *उदर*– उदर पेशियों में खिंचाव उत्पन्न होता है। नितम्ब भी किंचित् सिकुड़ते हैं, ताकि दोनों पैर एक साथ और स्थिर रह सकें।
- *पैर*– घुटने के पीछे की नसें किंचित् आकुंचित होती हैं, ताकि पैर अपनी स्थिति में रह सकें।

अभ्यास के अगले चरण

सूर्य नमस्कार में सम्मिलित प्रथम सात आसन एक सम्पूर्ण अभ्यास का आधार हैं। ये आसन सुन्दर स्थितियों की एक शृंखला का ही आधार नहीं है, वरन् ऐसे बीजों के समान हैं जो संघटित शरीर रचना के एक नए तथा शक्तिशाली अनुभव के रूप में फलते-फूलते हैं।

सूर्य नमस्कार के गत्यात्मक पक्ष का लक्ष्य है–शारीरिक ढाँचे में सामंजस्य लाना तथा उसे शक्तिशाली बनाना। श्वास तथा मंत्र के साथ जोड़ देने पर सूर्य नमस्कार का प्रभाव सूक्ष्म शरीर तथा व्यक्तित्व पर पड़ता है। अभ्यास को धीमी गति से करने पर इसका प्रभाव अधिक सूक्ष्म हो जाता है और हमें श्वास व नाड़ियों तथा शरीर व मन के एक-दूसरे पर पड़ने वाले प्रभावों को ठीक से समझने का अवसर मिलता है। जैसे-जैसे अभ्यास के द्वारा हमारे व्यक्तित्व के सूक्ष्म क्षेत्र प्रभावित होते जाते हैं, हमारी सजगता में भी वृद्धि हो जाती है।

सजगता की गहनता हेतु सीमाओं से मुक्ति पाना आवश्यक है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते समय हम अपनी शारीरिक संस्थितियों को नए क्षेत्रों तथा अनुभवों के प्रवेश द्वार के रूप में उपयोग करते हैं, अत: शरीर तथा मन के अन्दर की कुछ बाधाओं को समाप्त करना आवश्यक है। कड़ा शरीर इस बात का द्योतक है कि मन और चिन्तन भी कड़े हैं, अर्थात् उनमें सामंजस्य स्थापित करने या समायोजन की क्षमताओं का तथा सृजनात्मकता का अभाव है। आदतें संस्थितियों तथा ऊर्जा प्रवाह को निश्चित प्रतिरूपों में सीमित कर देती हैं। इससे कुछ शारीरिक अवयवों तथा क्रियाकलापों में वृद्धि अवश्य होती है, परन्तु अन्य अवयव उपेक्षित रह जाते हैं। कुछ क्षेत्रों में अधिक ऊर्जा प्रवाह तथा कुछ में कम ऊर्जा प्रवाह के कारण व्याधियाँ

उत्पन्न होती हैं। असन्तुलन की इस स्थिति को सूर्य नमस्कार के अभ्यास से दूर किया जाता है।

सूर्य नमस्कार में विभिन्न आसनों का क्रमिक अभ्यास करते समय हमारा लक्ष्य धीरे-धीरे प्रत्येक स्थिति के प्रति अपनी सजगता में वृद्धि करने का होना चाहिये। हमें यह अनुभव करना चाहिये कि हम धीरे-धीरे शरीर की गहराइयों के सम्पर्क में आते जा रहे हैं और इस प्रकार अपने शारीरिक आयाम को निकटता से देख व समझ पा रहे हैं। इतना ही नहीं, हम अपनी सीमाओं के प्रति जागरूक होकर उन्हें समाप्त भी कर सकते हैं, क्योंकि हम किसी विशेष स्थिति का अभ्यास नहीं कर सकते; इसमें क्या-क्या बाधाएँ हैं; प्रत्येक बाधा को समझकर उसे धीरे-धीरे परन्तु दृढ़ता से समाप्त करने का प्रयास करना चाहिये। इस सम्बन्ध में हम इस अभ्यास के साथ कुछ अन्य आसनों को भी सम्मिलित कर सकते हैं, जिससे शरीर पर पड़ने वाले सूर्य नमस्कार के प्रभावों में वृद्धि हो सके।

नमूने के लिए अभ्यास

सूर्य नमस्कार के आसन सजगता तथा शारीरिक लोच के विकास में किस प्रकार उपयुक्त सिद्ध हो सकते हैं, इसके लिए उदाहरणस्वरूप निम्नांकित कार्यक्रम प्रस्तुत किया जा रहा है (इसमें वर्णित आसनों के विषय में जानकारी हेतु हमारा प्रकाशन 'आसन प्राणायाम मुद्रा बन्ध' देखें)। लचीलापन लाने के उद्देश्य से गत्यात्मक आसनों को करने के पूर्व सूर्य नमस्कार किया जा सकता है। इन आसनों को करने के पश्चात् सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से प्राणों के प्रति सजगता का विकास होता है।

- *स्थिति 1* – सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते समय मन को ध्यान के अनुकूल स्थिति में लाने के लिए प्राणायाम प्रारंभिक बिन्दु है। श्वास, हाथों की स्थिति तथा इस स्थिति से हमारी भावनाओं तथा दृष्टिकोण या पड़ने वाले प्रभाव के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु हमें अपने को पर्याप्त समय देना चाहिये।
- *स्थिति 2* – हस्ताउत्तानासन द्वारा शरीर के अग्र मार्ग से ऊर्जा का आरोहण होता है। यह ऊर्जा मूलाधार से बिन्दु तक शरीर के अग्र भाग से होती हुई आगे बढ़ती है। एक बार ऊर्जा के बढ़ जाने पर हम ताड़ासन की स्थिति में आकर अथवा एक हाथ को दूसरे हाथ से थोड़ा अधिक ऊपर उठाकर

और फिर दूसरा हाथ भी ऊपर उठाकर वक्ष के दोनों पार्श्वों और कमर में खिंचाव उत्पन्न कर सकते हैं। इस स्थिति में तिर्यक ताड़ासन भी किया जा सकता है।

- *स्थिति 3* – पादहस्तासन में धीरे-धीरे शरीर के पृष्ठ भाग में खिंचाव उत्पन्न करने के लिए गुरुत्वाकर्षण का उपयोग किया जा सकता है। गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव और भी गहन हो जाता है जब एक-दूसरे से जुड़े हाथों को सिर के पीछे ले जाकर वहाँ रख लिया जाता है। इस स्थिति में हम कोहनियों को पीछे की ओर खींच सकते हैं ताकि वक्ष के अग्रभाग की पेशियों में खिंचाव उत्पन्न हो सके।

  यह अभ्यास दमा में विशेष रूप से लाभकारी है। इस स्थिति के बाद सीधे द्विकोणासन का अभ्यास किया जा सकता है। इस अभ्यास में हाथों की अँगुलियाँ एक-दूसरे में फँसी रहेंगी तथा हाथ पीछे की ओर फैले और खिंचे रहेंगे। इस प्रकार गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव पुनः बढ़ जाता है तथा स्कंध मेखला की पेशियाँ शिथिल तथा सशक्त होती हैं। हाथों को एक ओर से दूसरी ओर घुमाने पर तनाव स्कंध मेखला के बाहर की ओर बढ़ता है तथा पीठ के ऊपरी भाग की मालिश हो जाती है। इससे रक्तसंचार में भी वृद्धि होती है। थोड़े समय तक के लिए समकोणासन का बार-बार अभ्यास कर पुनः पादहस्तासन में वापस लौट भी सकते हैं।
- *स्थिति 4* – श्रोणिप्रदेश, पुट्ठों, जाँघों तथा सन्तुलन के प्रति सजगता को शक्तिशाली बनाने वाले आसनों के लिए अश्वसंचालनासन एक आधार प्रदान करता है। जिस प्रकार हस्तउत्तानासन में हाथों को ऊपर हवा में उठाया जाता है, उसी प्रकार इस स्थिति में भी ऐसा ही कर सकते हैं और पीछे की ओर ले जाये गये पैर के अग्र भाग के खिंचाव को बढ़ा सकते हैं। ऐसा करने से मुड़े हुए पैर की जाँघें तथा नितम्ब भी शक्तिशाली बनते हैं। विकल्प के रूप में मिले हाथों को पीछे द्विकोणासन की भाँति रखा जा सकता है। इससे पीठ की वक्रता और भी बढ़ जायेगी तथा अभ्यास अधिक प्रभावशाली बन जायेगा।
- *स्थिति 5* – सुमेरु आसन के अधिक प्रकारान्तर नहीं है, परन्तु एक पैर से दूसरे पैर की ओर गति करते समय पैर के पीछे के खिंचाव को बढ़ाया जाता है।

- *स्थिति 6* – अष्टांग नमस्कार भी एक ऐसा अभ्यास है जिसका प्रकारान्तर नहीं है। पीठ पर पड़ने वाले प्रभाव में वृद्धि के लिए हमें घुटनों को शरीर के नजदीक रखना चाहिये।
- *स्थिति 7* – सुबह के समय भुजंगासन का अभ्यास करना कठिन होता है। यदि शरीर में कड़ापन हो तो पीठ की पेशियों को ढीला करने के लिए यह उचित होगा कि स्थितियाँ 5, 6 तथा 7 की कुछ आवृत्तियाँ तेजी से कर ली जायें। पीठ को ढीला करने के उद्देश्य से कोई गत्यात्मक शारीरिक क्रिया करने के लिए तिर्यक भुजंगासन का अभ्यास करना उचित होगा।

अनुभव का विस्तार करना

जब हम सजगतापूर्वक तथा श्वास पर नियंत्रण रखते हुए धीरे-धीरे सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते हैं, तब शरीर के विषय में हमारे ज्ञान की वृद्धि होती है। सूर्य नमस्कार का एक चक्र पूरा करने में 10, 15 अथवा 20 मिनट का समय लग सकता है। यद्यपि इतने समय हम 50 या उससे अधिक आसन करके सम्पूर्ण पेशी समूह को ढीला कर सकते हैं तथा आन्तरिक अंगों पर प्रभाव डाल सकते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि हम धीमी गति से सूर्य नमस्कार करने की आदत डाल रहे हैं। वस्तुत: हम अपने शरीर की आवश्यकताओं के अनुरूप सृजनात्मक ढंग से ऐसा कर रहे हैं।

सूर्य नमस्कार का अभ्यास करते समय जैसे-जैसे शरीर में उत्पन्न होने वाले खिंचाव, सजगतापूर्वक की गई श्वसन प्रक्रिया तथा शरीर के बारे में मिलती हुई जानकारी के स्वास्थ्यप्रद प्रभाव तथा उनसे होने वाली प्रसन्नता से हम परिचित हो जाते हैं, वैसे-वैसे हममें जीर्ण तनाव (जो रोग उत्पन्न करते हैं) भी समाप्त होते जाते हैं। शरीर सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने, तनाव से मुक्ति पाने तथा अच्छा लगने के अनुभव सारे दिन हमें शक्ति देते रहते हैं – चाहे हम जहाँ भी हों, चाहे जो भी कार्य कर रहे हों। व्यस्त दिनचर्या के कारण उत्पन्न थकावट तथा शारीरिक कड़ेपन को दूर करने हेतु कुर्सी पर बैठे-बैठे हम अपने हाथों को ऊपर या पीछे की ओर खींच सकते हैं अथवा खड़े रहने की स्थिति में हस्तउत्तानासन कर सकते हैं या आगे की ओर झुककर पादहस्तासन का अभ्यास कर सकते हैं।

इस प्रकार हम अपने स्वास्थ्य तथा प्रसन्नता की जिम्मेदारी स्वयं अपने हाथों में ले लेते हैं तथा निर्बन्ध करने वाले सामाजिक रीति-रिवाजों या बाह्य

शक्तियों की कृपा पर निर्भर रहने की विवशता पर नियंत्रण प्राप्त कर लेते हैं। तब हम विक्षिप्त व्यवहारों के नियत प्रतिरूपों की सीमा से बाहर आकर सहज प्रसन्नता से नाच उठते हैं। हम बाह्य वातावरण को भी प्रभावित करते हैं, क्योंकि शान्त व प्रसन्न व्यक्ति दूसरे लोगों के मन पर भी सकारात्मक प्रभाव डालता है।

सूर्य नमस्कार का अभ्यास लगातार करते रहने से हमारी सम्पूर्ण जीवन-शैली तथा जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण प्रभावित और परिवर्तित होने लगता है। इसके दैनिक अभ्यास से अपनी गवेषणा करने की जो क्षमता प्राप्त होने लगती है, उसका प्रभाव हमारे क्रियाकलापों, गतिविधियों तथा लोगों के साथ हमारे व्यवहार पर भी पड़ता है। इस प्रकार हमें जीवन का एक सकारात्मक तथा रचनात्मक मार्ग दिखलाई पड़ने लगता है।

अभ्यास – संक्षेप में

	आसन	मन्त्र	सजगता
रेचक	1. प्रणामासन	ॐ मित्राय नमः ॐ ह्राम्	अनाहत चक्र
पूरक	2. हस्तउत्तानासन	ॐ रवये नमः ॐ ह्रीम्	विशुद्धि चक्र
रेचक	3. पादहस्तासन	ॐ सूर्याय नमः ॐ ह्रूम्	स्वाधिष्ठान चक्र
पूरक	4. अश्व संचालनासन	ॐ भानवे नमः ॐ ह्रैम्	आज्ञा चक्र
रेचक	5. पर्वतासन	ॐ खगाय नमः ॐ ह्रौम्	विशुद्धि चक्र

 *बहिर्कुम्भक*	6. अष्टांग नमस्कार	ॐ पूष्णे नम: *ॐ ह्र:*	मणिपुर चक्र
 *पूरक*	7. भुजंगासन	ॐ हिरण्यगर्भाय नम: *ॐ ह्राम्*	स्वाधिष्ठान चक्र
 *रेचक*	8. पर्वतासन	ॐ मरीचये नम: *ॐ ह्रीम्*	विशुद्धि चक्र
 *पूरक*	9. अश्व संचालनासन	ॐ आदित्याय नम: *ॐ ह्रम्*	आज्ञा चक्र
 *रेचक*	10. पादहस्तासन	ॐ सवित्रे नम: *ॐ ह्रैम्*	स्वाधिष्ठान चक्र
 *पूरक*	11. हस्तउत्तानासन	ॐ अर्काय नम: *ॐ ह्रौम्*	विशुद्धि चक्र
 *रेचक*	12. प्रणामासन	ॐ भास्कराय नम: *ॐ ह्र:*	अनाहत चक्र

नोट

नोट



स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम (उत्तरांचल) में सन् 1923 की मार्गशीर्ष पूर्णिमा को हुआ। उनमें बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक जीवन के प्रति झुकाव था और विलक्षण प्रतिभाएँ परिलक्षित होती थीं। 18 वर्ष की अवस्था में उन्होंने गुरु की खोज में घर छोड़ दिया। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए। 12 सितम्बर 1947 को गुरु ने उन्हें परमहंस संन्यास में दीक्षित किया। वे 12 वर्ष गुरु की सेवा में रहे और आध्यात्मिक जीवन के हर आयाम में दक्षता प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने परिव्राजक संन्यासी के रूप में आठ वर्षों तक सम्पूर्ण भारत, अफगानिस्तान, बर्मा, नेपाल एवं श्रीलंका का भ्रमण किया। इस अवधि का उपयोग उन्होंने यौगिक तकनीकों को प्रतिपादित एवं परिष्कृत करने में किया, ताकि मानवता को कष्टों से त्राण मिल सके।

योग की प्राचीन पद्धति को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर उन्होंने 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक विश्व भ्रमण करते हुए उन्होंने योग की पताका विश्व के कोने-कोने में फहरा दी और बिहार योग विद्यालय को योग की एक अग्रगण्य संस्था के रूप में ख्याति दिलायी। उन्होंने योग, तंत्र एवं आध्यात्मिक जीवन पर अस्सी से अधिक ग्रन्थों का प्रणयन किया।

'सत्यानन्द योग' एक ऐसी परम्परा बन गयी, जिसमें शास्त्रीय और अनुभवात्मक ज्ञान तथा आधुनिक दृष्टिकोण का सुन्दर समन्वय है। ग्राम्य-विकास की भावना से 1984 में उन्होंने दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से 'योग शोध संस्थान' की स्थापना की। सन् 1988 में उपलब्धियों के शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सबकुछ त्याग दिया और क्षेत्र संन्यास लेकर परमहंस संन्यासी की जीवन पद्धति अपना ली। सन् 1989 में उन्हें रिखिया आने का दैवी आदेश हुआ, यहाँ उन्होंने एकान्तवास करते हुए उच्च वैदिक साधनाएँ कीं। सन् 1991 में अपने पड़ोसियों को सुविधाएँ उपलब्ध कराने का आदेश मिलने पर उन्होंने आश्रम को उस क्षेत्र के अभावग्रस्त ग्रामीणों की सहायता करने की अनुमति दी। सन् 1995 में उन्होंने वैश्विक सुख, शान्ति एवं समृद्धि का संकल्प लेकर बारह वर्षीय राजसूय यज्ञ आरम्भ किया और सन् 2007 में 'सेवा, प्रेम और दान' को अपनी मुख्य गतिविधि बनाने का आदेश देकर रिखियापीठ की स्थापना की घोषणा की।

स्वामी सत्यानन्द 5 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में अपने शिष्यों की उपस्थिति में महासमाधि में लीन हो गये।



सूर्य नमस्कार एक महत्त्वपूर्ण योगाभ्यास है जिसका प्रारम्भ प्राचीन वैदिक काल से माना जाता है जब आध्यात्मिक चेतना के एक परम शक्तिशाली प्रतीक के रूप में सूर्योपासना की जाती थी। अपने रहस्यमय उद्गम काल से क्रमशः विकसित होकर सूर्य नमस्कार बारह आसनों के समवाय के रूप में निखर कर सामने आया है जिसके नियमित अभ्यास से प्राणोत्पादक शक्ति का सृजन होता है। इसका लक्ष्य है योगाभ्यासी को शुद्धिकरण एवं पुनर्यौवन प्रदान करना।

इस पुस्तक में सूर्य एवं बीज मन्त्रों के साथ सूर्य नमस्कार की सम्पूर्ण प्रक्रिया का सविस्तार वर्णन किया गया है। साथ ही योग प्रशिक्षक एवं योगाभ्यासी के सहायतार्थ एकाग्रता के बिन्दुओं सहित अन्य विषयों पर विस्तृत मार्गदर्शन प्रदान किया गया है। शरीर-विज्ञान की दृष्टि से सूर्य नमस्कार के गहरे अनुशीलन से एक शक्तिशाली उपचार-विधि के रूप में इसकी उपादेयता प्रमाणित होगी जो आज की आवश्यकताओं के अनुरूप है।



ISBN :978-81-85787-47-3